महारामायण

चतुर्थ मन (साधन) खण्ड

(महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज कृत)

—:o:—

सम्पादक—

नन्दू भाई

निज़ामाबाद (दक्षिण)

—:o:—

अ० स० सम्पादक—

देवीचरन मीतल

लेखराजनगर, अलीगढ़

—❋—

प्रकाशक—

नन्दू भाई प्रधान

शिव साहित्य प्रकाशन मंडल,

पो० दयाल नगर, अलीगढ़

द्वितीय संस्करण | सर्वाधिकार सुरक्षित | मूल्य १) प्रति
सं० शाका १८८५

विषय--सूची महारामायण चतुर्थमन (साधन) खंड

प्रथम भाग

क्रम संख्या		विषय सूची	पृष्ठ संख्या
पहिला	समुल्लास	किष्किन्धा	३१५
दूसरा	,,	राम हनूमान	३१७
तीसरा	,,	राम सुग्रीव	३२१
चौथा	,,	सुग्रीव का संशय	३२५
पांचवाँ	,,	राम का सुग्रीव को प्रेम भाव सिखाना	३२८
छठा	,,	सुग्रीव में वैराग्य	३३०
सातवां	,,	सुग्रीव और बालि की पहली लड़ाई	३३२
आठवा	,,	सुग्रीव और बालि की दूसरे दिन की लड़ाई	३३६
नवां	,,	बालि की मृत्यु	३३६
दसवाँ	,,	सुग्रीव का राज तिलक	३३६

द्वितीय भाग

पहिला	समुल्लास	वर्षा ऋतु	४४२
दूसरा	,,	वर्षा ऋतु (लगातार)	३४५
तीसरा	,,	शरद ऋतु	३५२
चौथा	,,	शरद ऋतु (लगातार)	३५५
पाँचवां	,,	राम की बेचैनी और किष्किन्धा में बेकली	३५६

तृतीय भाग

पहिला	समुल्लास	सीता जी की खोज का प्रबन्ध	३६६
दूसरा	,,	बानर कटक (बंदरों की पलटन	३६३

चतुर्थ भाग

पहिला	समुल्लास	सीता जी की खोज	३६६
दूसरा	,,	संपाती	३६६
तीसरा	,,	सम्पाती की कथा	३७३
चौथा	,,	बल पराक्रम विचार	३७६
		इस खंड के सम्पूर्ण आशय की संक्षिप्त व्याख्या	३७८

ओ३म् महः

महारामायण

चतुर्थ मन (साधन) खण्ड

ओ३म् महः

प्रथम भाग

पहिला समुल्लास

किष्किन्धा

बन खंड (आरण्य) का साधन समाप्त हुआ। अब पहाड़ और पहाड़ी गुफा में निवास करना है। बन में तप होता है। इन्द्रियों के शम (शान्त) करने की आवश्यकता रहती है और पहाड़ के एकान्त सेवन से मन के दम (दमन-रोकना) का लाभ होता है।

बन में राम ने सब कुछ कर लिया, लेकिन शुषुम्ना की हानि हुई। भक्ति की सूझी। शबरी से मिले। इसने शिक्षा दी। किस बात की शिक्षा दी? सुग्रीव से मित्रता करो। वह काम

आयेगा और खोई हुई सीता मिल जायेगी। पम्पासर का पता दिया, ऋष्यमूक पर्वत का ठिकाना बताया जो किषकिन्धा राज में है।

सुग्रीव कौन है ? सुन्दर-सु (अच्छा) और ग्रीव (कंठ, गला), इसका नाम सुकंठ भी है। सुकंठ कहते हैं मिठ भाषण करने वाले को। सुन्दर और सुभाषण ! क्या कभी ऐसा सुना है ? या कभी ऐसा देखा है ? असंभव। व्यवहार के जगत में ऐसा सुनने और देखने में नहीं आया। यह रामायण ही है जो बन्दर को सुग्रीव और सुकंठ की पदवी देती है।

बानर संस्कृत 'वा' (सदृश-समान) 'नर' (मनुष्य), जो मनुष्य के सदृश और समान हो वह बानर कहलाता है और मनुष्य वह है जिसमें मन की मनन वृत्ति की प्रबलता हो।

पम्पासर, पम्प (पानी) सर (तालाब), ऋष्यमूक ऋष्य (चलना) और मूक (चुप चाप), जहां चुप चाप चला जाता है वह ऋष्यमूक पर्वत है। किषकिन्धा संस्कृत किष (गुफा) किन या किम् (क्या) और धा (धारण करना), क्या धारण करना है ? गुफा का धारण करना यह किषकिन्धा है। इतनी बातें बता दी गईं। यह सच्ची हैं या झूँठी ? इसका विचार तुम आप करो।

यह प्रसंग मन के दमन का है, और इस मन का रूप क्या है ? बन्दर का। यह चित्त में रक्खो।

बाल—लड़का।

अयोध्या—अवनि, शरीर-दशरथ, दश इन्द्री वाले की राजधानी।

आरण्य—बन, तप जप से इन्द्रियों को शान्त किया जाये।

किषकिन्धा—जिससे मन की रोक थाम हो सके। यह चार खंड या काण्ड हैं।

इस काण्ड में मन रूपी बन्दर के खेल की लीला है। इस का ध्यान रहे। फिर आगे का प्रसंग आप ही आप बिना परिश्रम के समझ में आता चलेगा। रामायण का विषय बार बार सोचने, सोचते रहने और मन की वृत्ति दृढ़ करने से समझ में आयेगा। विषयीजन, रामायण को पढ़ते, गाते, रामा भज रामा करते हैं। उनका अधिकार और संस्कार बस इतना ही है। उन्हें छोड़ो। तुम विचारशील और विवेकशील हो। तत्त्व ग्राहक बनो। इससे बहुत लाभ होगा और महीनों ही में जीवन कुछ का कुछ बनने लगेगा।

यह मन क्या है? बन्दर है और बन्दर भी महा विचित्र बन्दर है।

बिना हाथ के शाखा पकड़े, बिना पाँव के डोले।
मुंह के बिना स्वाद रस लेवैं, बिन वाणी के बोले ॥१॥
लूला लँगड़ा पर्वत लांघे, लंका पर चढ़ जावे।
सीता सती का पता लगाये, राम की भक्ति कमावे ॥२॥
चित से चिंतन मन से मनन करे, बुद्धि से नाता जोड़े।
राम का सच्चा अभिमानी मन, जग का भाँड़ा फोड़े ॥३॥
दृढ़ निश्चय विश्वास की दृढ़ता, किषकिन्धा में बासा।
राम मिलैं करै राम की भक्ती, सबसे रहे उदासा ॥४॥
किषकिन्धा का मर्म सुगम है, कोई कोई भेदी जाने।
ले दुरबीन हाथ में अपने, लंका देख दिखावे ॥५॥

यह इस खण्ड की भूमिका है। इसे चित्त में रख कर तब कथा प्रसंग का रस लो।

दूसरा समुल्लास

राम हनुमान

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः! ओ३म् भूर् भुवः स्वः चुप!

पहिले चुप हो जाओ छोड़ो चिंता इस भू लोक की।
शान्ती निरभ्रान्ती, निर्व्यापती सुख शोक की ॥१॥
फिर भुलाओ सुवर को, और ओ३म् का साधन रहे।
अन्तरिक्षी भाव छूटे, ओ३म् निस दिन मन कहे ॥२॥
इतना करलो और फिर, सुर लोक की चिंता को त्याग।
आगे हो सवितुर वरेण्यम् तत, तो जागे सोया भाग ॥३॥
बंध जब तीनों लगे, बन्दर की करली रोक थाम।
इसके पीछे मेरे मित्रो! पाओगे तुम राम नाम ॥४॥
नाम लेने की यह युक्ति है, इसी से काम लो।
यत्न हो सच्चा निरूपण, नाम में विश्राम लो ॥५॥
उलटो मन को, और मन से राम का लो उलटा नाम।
बाल्मीकि बन के पाओ, ब्रह्म का फिर सच्चा धाम ॥६॥
भेद देता हूँ तुम्हें, भेदी हूं मैं सत देश का।
मैं नहीं सांगी बना, साधक नहीं हूँ भेष का ॥७॥

राम लक्ष्मण ने आगे की ओर पग बढ़ाया। चलते २ ऋष्य-मूक पर्वत की चोटी दिखाई दी। उसकी तराई में बंध बांध कर पम्पासर का झील बनाया गया था। ठंडी ठंडी हवा बह रही थी। झील लम्बा चौड़ा था। दोनों भाई उसकी परिक्रमा करते हुये पहाड़ के नीचे जा पहुँचे।

वहां अपने मन्त्रियों के साथ सुग्रीव रहता था। उसने ऊपर पहाड़ की चोटी से इन दोनों सिंहों को आते हुये देखा। डरा, सहमा, भयभीत हुआ। उसके सहायक युवकों में एक बन्दर का नाम हनूमान था। वायु के समान तेज दौड़ने वाला था और इसी उपेक्षा के कारण वह मारुती, मारुत सुत और पवनकुमार भी कहलाता था। इसका शरीर वज्र के समान बली था जिसको न शस्त्र छेद सकता था, न कोई हथियार घायल कर सकता था। उसको लोग बजरंगबली भी कहते थे।

सुग्रीव ने हनूमान को बुलाया। वह आगये। सुग्रीव ने हाथ की उँगली के संकेत से पहाड़ पर चढ़ने वाले वीरों को दिखा कर कहा—"वह देखो, दो वीर पुरुष चले आ रहे हैं। इनका बालकपन विचित्र है। मस्त मतंग हैं। इनके अङ्ग अङ्ग से वीर रस टपक रहा है। यह कौन हैं कौन नहीं है इसका पता लगाना है। कहीं यह 'बाली' के गुप्त दूत तो नहीं हैं जो मेरा पता लेने को आ रहे हैं। ऐसा हो तो मैं इस सुनसान पर्वत से भी अपना डेरा दण्डा उठाऊँ। यहाँ से कूँच करूँ। बाली जब तक जीता है, सुख चैन न लेने देगा।"

हनूमान ने उसी समय ब्राह्मण का भेष बनाया। गले में यज्ञोपवीत डाला। तिलक लगाया। एक हाथ में पोथी पत्रा लिये, दूसरे में एक पानी पीने की छोटी लुटिया ली। नंगे सर, नंगे पांव और नंगे बदन पहाड़ की चोटी से नीचे उतरे। राम लक्ष्मण चले आरहे थे। इनसे मिले।

हनूमान ने पूछा—"आप कौन हैं? बांके और वीर राज-पुत्रों के समान इस पहाड़ पर चढ़ रहे हैं! साँवला गोरा रंग! सुडौल, साँचे में ढला हुआ शरीर! आपकी हालत बता रही है कि आप यहाँ के रहने वाले नहीं हो। आपकी देह कोमल है। वह ऐसी कड़ी और पथरीली भूमि में चलने के योग्य नहीं है। सम्भव है कि या तो आप नर नारायण हैं या त्रिदेवों ब्रह्मा विष्णु शिव की श्रेणी के देवता हैं। यहां आने का कारण क्या है? कहीं तुम ब्रह्म के अवतार तो नहीं हो, जो इस भूमि के भार उतारने के लिये प्रगट हुये हो!"

राम ने उत्तर दिया—"सुनो वीर! हम अवध के राज-कुमार राम और लक्ष्मण हैं। भाई भाई हैं। हमारे साथ, मेरी स्त्री सीता थी। राक्षस धोका देकर उसे हर लेगये और उसी को बन बन पर्वत पर्वत और कन्दरा कन्दरा में खोजते फिरते हैं।

राक्षसों ने उसे कहाँ लेजाकर छुपाया है, इसका हमको पता नहीं है। हमारा चरित्र बस इतना ही है। तुम कौन हो और किस मन्तव्य से हम परदेशियों से यह पूछा पेखी कर रहे हो इसका कारण बताओ ?"

उत्तर के सुनते ही हनूमान राम के चरणों में गिरे, पहचान गये। सोया और दबा हुआ संस्कार जाग उठा:—

मेरे स्वामी आप हैं और मैं तो किंकर दास हूं।
माया ने भ्रमाया मैं भर्मा हुआ दुख राम हूँ॥
एक तो बुद्धि से मन चित से रहता हूं बिकल।
दूसरे माया तुम्हारी हो रही है अति प्रबल॥
कैसे मैं पहिचानता और कैसे तुमको जानता।
जान कर पहिचान कर भी कैसे यह मन मानता॥
मैं था अज्ञानी न समझा आपके निज रूप को।
क्या समझता! पड़के बन्धन में हूं बैठा बुद्धि खो॥
आपने पूछा मुझे कैसे अनाड़ी के समान।
आप हैं अनुमान के और ज्ञान के बुद्धि की खान॥
औगुणी हूँ निर्गुणी हूं दुर्गुणी बानर हूँ मैं।
भव में लम्पट होगया, नागर न गुण आगर हूँ मैं॥
भूलना मेरे स्वभाविक, जीव पामर बन गया।
जीवों में मैं हूँ अधम और नीच बानर बन गया॥
तुम मुझे भूले भुलाया दास को क्यों हाय राम।
क्या नहीं सेवक तुम्हारा, क्या नहीं लेता हूँ नाम॥

यह कर हनूमान विकल होकर चरणों से लिपट गये और लगे धाड़ें मार मार कर रोने !

राम ने उन्हें उठा कर अपनी छाती से लगा लिया—"

चुप रहो भांडा न फूटे, लीला करने आया हूँ।
लीला, नर लीला है नर का भेष भरने आया हूं॥

तुम मुझे प्यारे हो, और प्यारे हो लछमण के समान।
मैं नहीं भूला तुम्हें, तुम ही मेरे हो जान प्राण॥
जगत के व्यौहार में व्यौहार का करता हूँ खेल।
खेल देखो खेल में आनंद और सुख का हो मेल॥
नर बना नर रूप में नारी की संगत हो गई।
मैं दुखी होकर फिरा बन-बन में जब वह खोगई॥
तुम हो बन्दर बन्दरों की लीला को दो अपना चित्त।
अन्त करदो लीला का इस अन्त ही से होगा हित॥

हनूमान राम की कृपा को देखकर सारा दुख क्लेश भूल गये और राम के चारों ओर परिक्रमा करते हुये बन्दर के समान कूदने फाँदने लगे। उनके आनन्द की सीमा न थी।

हनूमान बोले—"प्रभो! इस ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव रहते हैं उनसे चलकर मिलिये। वह आपकी सेवा करेंगे और सीता का खोज लगायेंगे। आप दोनों भाई मेरे कँधों पर चढ़ बैठिये। मैं उछलता कूदता आपको पर्वत पर पहुँचा दूँगा। वैसे इसकी चढ़ाई कठिन है। चढ़ते हुये मनुष्य का पांव डगमगाता और लड़खड़ाता है।"

राम लछमण दोनों हनूमान के कँधों पर चढ़ बैठे और उसने उन्हें सुग्रीव के पास पहुंचा दिया।

तीसरा समुल्लास

राम-सुग्रीव

राम को देख कर सुग्रीव सुखी होगया, जैसे निरधन को धन मिल जाय तो वह आनन्द को प्राप्त हो जाता है। उठा, भाइयो के पांव में झुका। दोनों ने उसे छाती से लगाया।

हनूमान ने उसे सब समाचार सुना दिया। उसने आग

जलाई—"भगवन ! सूर्य, आकाश की ज्योति और अग्नि पृथ्वी की ज्योति को साक्षी देता हूं। दिन का समय है। चन्द्रमा रात्रि की ज्योति होती तो इसको भी साक्षी करता। मन, वचन कर्म से आपकी सेवा करता रहूंगा। जैसे हो सकेगा, सीता का खोज लगाऊँगा। यही नहीं, उसे आप से मिला कर छोड़ूँगा। सिर चाहे जाये, चाहे रहे, जीवन पर्य्यन्त सीता के खोज की धुन को न छोड़ूँगा। आप सन्तोष करें। मेरे साथ जितने बन्दर हैं सब आपके सच्चे सेवक होंगे।

एक दिन हम सब बन्दर यहाँ बैठे हुये थे। एक आकाशी विमान फड़फड़ाता हुआ जा रहा था और उसमें से हाय राम हाय राम ! के साथ रोने का शब्द आ रहा था। हम सब उठे पूछा "कौन" ? उत्तर नहीं मिला। हां, एक स्त्री ने विमान की खिड़की से सिर निकाल कर कुछ वस्त्र और आभूषण नीचे गिरा दिये। आकाशी रथ तो चला गया। वस्त्र और आभूषण मैंने रख छोड़े हैं।"

राम ने कहा—"जल्द लाओ।"

बन्दर दौड़े। उन्हें सामने लाकर रख दिया।

राम पहिचान तो गये कि यह सीता के हैं लेकिन लक्ष्मण से पूछा—"देखो तो सही यह सीता के हैं या किसी और के ?"

लक्ष्मण ने उन्हें देख कर कहा—"कँगन और आरसी को तो मैं पहिचानता नहीं, हाँ ! प्रातः काल सीता के चरणों में सिर झुकाने जाता था। यह नूपुर (अनवट) उसी के पाँव के हैं। इसमें किंचित् मात्र संदेह नहीं है।"

राम ने वस्त्र और आभूषण को लेकर अपनी छाती से लगा लिया। सुग्रीव ने कहा—"आप चिन्ता न कीजिये। मैंने दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली है। मैं आपकी सीता का पता लगाकर छोड़ूँगा।"

राम बोले—"मुझे तुम्हारी बात का विश्वास है, लेकिन यह तो बताओ तुम हो कौन ! और यहां इस निर्जन और सुनसान पर्वत पर क्यों बसे हो ? इसका कारण क्या है ?"

सुग्रीव ने ठण्डी साँस खींची।

"मैं और बाली दो भाई हैं। हम दोनों में परस्पर प्रेम था और सब सुखी थे। एक रात ऐसा हुआ कि हमारे महल के सामने माया का मय सुत आया और बाली का नाम लेकर पुकारा। वह गहरी नींद में सो रहा था। अपना नाम सुन कर उठा। मुझे साथ में लिया और हम दोनों उसके शब्द की ओर गये। वह बाली २ पुकारता जाता था और भागा चला जाता था और हम दोनों उसके पीछे पीछे थे। पहाड़ के समीप जाकर वह एक गुफा में छुप रहा। फिर पुकारने का शब्द बन्द हो गया। बाली ने कहा—"तू गुफा के मुँह पर बैठा हुआ मेरी बाट देखा कर। मैं इसको मार कर अभी आता हूँ" बाली महा बलवान है। उसे अपने बल का बहुत घमण्ड है, वह निडर होकर गुफा के अन्दर बैठा। मैं उसकी आज्ञानुसार गुफा के मुँह पर एक महीने तक बैठा रहा। वह नहीं आया और गुफा से रक्त की धार बहने लगी। लोग नगर से आये। मुझे समझाने बुझाने लगे कि बाली मर गया। राजसिंहासन को सूना नहीं रखना चाहिये। प्रजा बिगड़ जायगी या कोई शत्रु आगया तो सब कुछ छीन लेगा और दुखी करेगा।"

"मुझे राज की इच्छा नहीं थी। क्या करूँ बेबस था। प्रजा और मन्त्रियों ने मिल मिलाकर मेरा तिलक-उत्सव मनाया और मैं राज करने लगा।"

"छः महीने पीछे बाली लौटा। मुझे सिंहासन पर बैठा हुआ देख कर क्रोधित होगया। तान कर एक घूँसा मारा। मैं विकल हो गया। नगर को छोड़ यहाँ इस ऋष्यमूक पर्वत

पर आकर ठहरा। बाली को श्राप है कि वह यहां नहीं आ-सकता। मैं फिर भी उससे भयभीत रहता हूं। कौन जाने वह कब आजाये और मुझे मार खपाये। यह मेरे जीवन का मुख्य संक्षिप्त वृतान्त है। बाली ने मेरा सब कुछ छीन लिया, घर बार, धन स्त्री, तक को लेलिया।"

राम हँसे--"बाली के नाम का जो शब्द सुना गया, वह उसकी मृत्यु का संदेशा था। मय सुत (संस्कृत 'मय' चाल, और 'सुत'-लड़का), विश्वकर्मा (जगत के कर्मों) का प्रबन्ध करता है। जब कर्मों का प्याला भर कर छलक उठता है, तब मरने वाले मनुष्य को यह काल चेतावनी देने लगता है:-

रह संभल कर तेरे चलने का समय अब आगया।
भोग थे योनि के जो कुछ थे उन्हें सब पागया।
अब नहीं रह सकता दो दिन के लिये संसार में ॥
चल तुझे बंधना पड़ेगा विश्व कारागार में ॥२॥
दुष्ट बन कर दुष्ट कर्मों की कमाई में लगा।
भाव भक्ति छोड़ कर दुष रस में तू आकर पगा ॥३॥
नर्क में चल नर्क में चल कर करेगा तू निवास।
आश सब की छोड़ कर हो जायेगा सब से निरास ॥४॥
जैसी करनी वैसी भरनी मिलता है करनी का फल।
रहते हैं फिर भी वह नर अहंकार में अपने मचल ॥५॥

यह शब्द क्या है उसे भी सुनो:—

क्या तू सोवे मोह नींद में समय कूचका नियराना ॥
पहिले नगाड़ा केश भये उजले दूजे शब्द नहिं काना ॥१॥
तीजे नैन दृष्टि भई थोड़ी, चौथे आया साहब परवाना।
अबहु चेत तू कर नर मूरख कहां है ठौर ठिकाना ॥२॥

बाली को काल ने पुकारा। उसने उसके अभिप्राय को

नहीं। समझा उल्टे उसके साथ युद्ध करने चला। काल की गुफा में बैठकर उसने मय सुत को तो पाया नहीं। वह मायावी था। हाँ, वहाँ के जीव जन्तुओं को मारते हुये लहू की नदी बहा दी। अभी कुछ आयु शेष थी। लौट कर तुम को सताने लगा। अब उसके कर्मों का प्याला भर कर छलकने को है और मैं इस दुष्ट को एक ही बाण से मार गिराऊँगा। इस में संदेह न करो।"

चौथा समुल्लास

सुग्रीव का सँशय

सुग्रीव ने कहा "भगवान्! मुझे आप के बचनों का विश्वास तो है लेकिन बाली को मैं बचपन से जानता हूं। वह महा बलवान है। एक समय रावण उससे लड़ने आया। उसने उसे दबोच लिया और छः महीने तक अपनी बगल में दबाये रक्खा। बहुत प्रार्थना करने पर छोड़ दिया। मैं कैसे कहूँ आप सहज रीति में उसे मार सकेंगे!"

राम बोले—"रावण रजोगुणी बृत्ति है। बाली काम का रूप इसका प्रबल अंग है। स्थूल काम अंग ने रजोगुण को दबा रक्खा यह संभव है। कोई आश्चर्य की बात नहीं है, लेकिन कामी पुरुष अपने काम के बल से निर्बल निर्बुद्धि और निर्विवेक बना रहता है। अकामी और निष्कामी पुरुष के हाथ से उसकी मृत्यु होती है।"

सुग्रीव का संशय निवारण फिर भी नहीं हुआ और कैसे होता! एक तो स्वाभाविक चँचल दूसरे आपत्तियों का मारा हुआ। तीसरे भयभीत होकर भागा हुआ!

चंचल मन अति पातकी, तिस पर मदिरा पान।
बिच्छू ने तब डस लिया, पाया दुःख महान॥

उछले कूदे विकल हो शान्ति होगई दूर ।
बिलपै तड़पै रात दिन, चंचलता भरपूर ॥

सुग्रीव ने कहा–"नाथ ! आप जो कुछ कहते हैं, सब सत्य है । बाली महा बलवान है । आज तक किसी ने उसका सामना नहीं किया और जिसने कभी उस से लड़ने का साहस किया कुत्ते की मृत्यु मरा है । यहां सात ताड़ के लम्बे २ गाछ हैं, जो बीच से टेढ़े और झुके हुये हैं । साथ ही दुर्दुंभी नामक एक राक्षस की पर्वताकार सिर की खोपड़ी पड़ी हुई है । कहा जाता है जो कोई एक बाण से इन गाछों को छेदता हुआ गिरादे और साथ ही उसी बाण से दुन्दभी की हड्डी को उड़ादे केवल वही पुरुष बाली पर विजय पा सकता है ।"

राम ने पूछा—"इनका वृतान्त क्या है ?"

सुग्रीव ने उत्तर दिया—"बाली नित्य ताड़ी पिया करता था । वह प्रातःकाल आकर सातों ताड़ों को हाथ से पकड़ कर झुका देता था और उनका रस भी पी लेता था । वह अब तक खड़े हैं । और दुन्दभी एक राक्षस था जो मायावी मय सुत की गुफा में छुप जाने के पश्चात् बाली से लड़ने आया । बाली ने ऐसी गदा तान कर मारी कि वह मर गया । उसकी खोपड़ी में रक्त बहता था और वह यहाँ इसी पर्वत की चोटी पर आकर गिरा । मूक ऋषि इस स्थान पर तपस्या कर रहे थे । रक्त उनके शरीर पर आकर गिरा । उन्हें बुरा लगा । श्राप दिया कि–'बाली यहाँ पर आयगा तो उसकी मृत्यु होजागी और जो कोई पराक्रमी पुरुष एक बाण से इन ताड़ों को छेद कर गिरा देगा और दुन्दभी को उसी से उड़ायेगा तो उसको इस अधम पर विजय मिलेगी ।' ऋषि ने तो उस स्थान को अशुद्ध समझ कर छोड़ दिया और वहीं चले गये । बाली भय वश यहाँ नहीं आता ।"

राम ने कहा – "चलो मुझे दिखा दो।"

सुग्रीव उन्हें वहाँ ले गया। राम ने बाण को धनुष से जोड़ा। वह उड़ा। सातों ताड़ों को छेद कर गिरा दिया और दुन्दभी की खोपड़ी मृदङ्ग के समान बजती हुई उड़ी। कहाँ गई किसी को पता नहीं मिला। सबको आश्चर्य्य हुआ।

यह सबाह का मर्म है, समझें सन्त सुजान।
सुरत धनुष में जोड़कर, मारे शब्द का बाण ॥१॥
तरुवर माया का गिरे, खँड खँड सत खँड।
ऐसे साधक सुजन को, नहिं बाधा नहिं दण्ड ॥२॥

सुग्रीव को विश्वास तो हुआ, लेकिन यह मन बड़ा पापी है। इसके भीतर इतने संशय और विपर्य्य भरे हुये हैं कि वह जल्दी दूर नहीं होते।

गुरु विचारा क्या करे, जो हृदय भया कठोर।
नौ नेजे पानी चढ़ा, सूखी कोर की कोर ॥१॥
गुरु बेचारा क्या करे, चेले में है खोट।
वचन भाव विश्वास नहिं, सहे काल की चोट ॥२॥
गुरु बेचारा क्या करे, चेले में अभिमान।
तिस को जम न्योता दिया, हो हमरे महिमान ॥३॥
सतसंग सतसंग क्या करे, सत संगी नहिं कोय।
कथा वार्ता, कीर्तन, यह नहिं सत संग होय ॥४॥
सत का संग सतसंग है, और नहीं सतसंग।
सत गुरु सङ्ग सतसङ्ग है, करे भ्रम को भङ्ग ॥५॥
गुरु के संग में जाय कर, मिसरी नीर सम बन।
घुल जा मिल जा नीर में, यही है मुख्य जतन ॥६॥
पत्थर सम जल में पड़ा, सुने न माने बात।
गुरु बेचारा क्या करे, कुछ नहीं आवे हाथ ॥७॥

पाँचवाँ समुल्लास

राम का सुग्रीव को प्रेम भाव सिखाना

राम ने सुग्रीव को समझाया—"प्रेम में बल और शक्ति है। अप्रेम (द्वेष) में निबलता और कायरपन रहता है।"

"प्रेमी अपने प्रेम बल से बलवान, धैर्य्यवान और शान्तिवान बना रहता है। और जिसमें प्रेम नहीं है वह ईर्षा और द्वेषाग्नि से अपने मन में आप जला करता है।"

"प्रेम में ठंडक है। प्रेमी का हृदय ठंडा रहता है। और जो लोग उससे मिलते हैं और उसकी बातें सुनते हैं, वह भी ठंडे और शीतल स्वभाव वाले हो जाते हैं।"

"मेरे गुरु बिश्वामित्र ने मुझे चेतावनी दी कि विश्व (जगत) के मित्र बनो—"मित्रस्य चक्षु सा समेक्षा महे" (सब को मित्र की दृष्टि से देखो)। हिंसक बनकर किसी का हृदय न दुखाओ। "अहिंसा परमोधर्म" (सबसे बड़ा अधर्म इस जगत में अहिंसा ही है।"

"ऐ सुग्रीव! अब मैं तुम्हारा मित्र हूँ। जो मित्र के दुख से दुखी नहीं होते उन पर आपत्ति और विपत्ति का आक्रमण होता है।"

"मित्र का दुख राई के समान छोटा हो, तो उसे हिमालय पर्वत समझे और अपना दुख हिमालय है तो उसे राई प्रतीत करे।"

"मित्र वह है, जो संकट के समय मित्र के काम आवे और वह जो स्वार्थी है सामने चिकनी चुपड़ी बातें करता है पीठ पीछे निन्दा करता रहता है, यह न मित्र है और न हो सकता है।"

"मैं तुम्हारा मित्र हूं। एक तुम और एक मैं! एक-एक मिलकर दो और एक एक मिलकर ग्यारह होते हैं।"

"दो जन मित्र हैं और दोनों के मन मिल गये हैं तो वे पहाड़ को खोद कर ढा सकते हैं। उसमें से बड़े बड़े नदी और नाले निकाल सकते हैं। और दो मनुष्य जिनके हृदय नहीं मिले हुये हैं वह न लोक का काम कर सकते हैं न परलोक का।"

"मित्रता निष्काम कर्म है। मित्र निष्काम होता है। वह अपने आपको नहीं देखता। मित्र को देखा करता है।"

"वह पुरुष धन्य है जो निष्काम जीवन व्यतीत करता और दूसरों के काम आता है। यह मित्रताई का सच्चा लक्षण है।"

"मरना भला है उसका जो अपने लिये जिये।
जीता है वह जो मर चुका है औरों के लिये॥"

"जिसे मित्र मिल गया वह सहज में भक्ति भाव का अधिकारी बन गया। और जिसे मित्र नहीं मिला वह भक्ति भाव को कदापि नहीं समझ सकता।"

"(१) निज स्वार्थी कपटी और छली सेवक, (२) कंजूस राजा, (३) दंभी मित्र और (४) बुरी स्त्री के छोड़ने में भलाई है। यह चारों के चारों काले कौड़ियाले नाग हैं। न जाने किस समय डस लें।"

"तुमको मेरा पूर्ण विश्वास होना चाहिये, नहीं तो यह मित्रताई कैसी।"

"मैं तुम से सच सच कहता हूँ कि मेरी मित्रताई से तुम में बल की वृद्धि होगी। सोच न करो। अब चिन्ता को छोड़ दो। मैं इस बाली को बिना मारे हुये अब नहीं छोड़ूँगा।"

छठा समुल्लास

सुग्रीव में वैराग्य

राम ने साधारण बातें कही थीं। सुग्रीव के अन्तःकरण में विश्वास तो उत्पन्न हो गया लेकिन पासा उलटा पड़ा। व्यवहार की ओर से उसका मन पलट गया। ज्ञान का प्रभाव विशेष पड़ा।

सुग्रीव बोला—"मैं मन वचन कर्म से आपका दास तो हो चुका। परिवार समेत आपकी सेवकाई करूँगा और करता रहूँगा, बल्कि इन सबको भी त्याग दूंगा। आपकी सेवकाई मेरा सम्पूर्ण इष्ट होगी।"

"यह सब माया और प्रपंच है। शरीर क्षणभंगुर है। आज है कल नहीं है। इसकी क्या ममता की जाये। मित्र, शत्रु, सुख, दुख, धन, दरिद्रता, जीवन, मरण, लोक, परलोक, नर्क स्वर्ग यह सब के सब माया कृत हैं। बाली की शत्रुता आपके दर्शन का कारण बनी। इसे भी क्या कहूँ। वह भी धन्य है और मैं भी धन्य हूँ। स्वप्न में किसी के साथ लड़ाई हुई। नींद के खुलने पर न कहीं लड़ाई है न भिड़ाई है। यह संसार स्वप्न मात्र है। स्वप्न तो स्वप्न ही है। जागृत और सुषुप्ति भी स्वप्न के समान हैं। जब किसी में कुछ सार नहीं है तो स्वप्न के अतिरिक्त उसे और क्या कहा जाये! आपके चरण कमल की भक्ति ही सार पदार्थ है और अब किसी बात की इच्छा नहीं है।"

राम ने कहा—"यह तुम जो कहते हो सच ही है। इसके सच होने में कोई संदेह नहीं है लेकिन इसकी जड़ नहीं है। वैराग दो प्रकार का होता है। कारण वैराग और अकारण वैराग! सँसार के दुख से दुखी होकर इससे भागना कारण

वैराग है। इनका कोई ठौर ठिकाना नहीं है।"

बन में गये तो बन बने, घर में अन बन होय।
मन का सकल प्रपंच है, ज्ञान भक्ति गये खोय॥
घर के मारे बन गये, बन तजि बस्ती आय।
दुख दाई है यह दशा, मन न कहीं ठहराय॥

"अकारण वैराग में ग्रहण और त्याग कुछ भी नहीं है। क्या किसी से लेना है और क्या किसी को देना है! क्या छोड़ा और क्या लिया! शरीर इन्द्री मन तो हर जगह साथ हैं और यह प्रपंच के मूल कारण हैं। यह न सुगमता से त्यागे जाते हैं और न त्यागे जा सकते हैं। जब तक यह हैं तब तक कैसा ग्रहण और कैसा त्याग!"

घर छोड़ा बन को गये, फूंस की कुटी छवाय।
क्या छोड़ा और क्या लिया, भ्रम से रहे भ्रमाय॥
घर बन एक समान हो, हर्ष शोक में सम।
यह वैराग महान हैं, मन इन्द्री शम दम॥

"इसलिए ऐ सुग्रीव! इस मन के धोके में न आओ। यह खेल खिला कर ऐसा मारता है कि इसका मारा हुआ फिर नहीं सँभल सकता।" सुग्रीव ने पूछा—"फिर मनुष्य का क्या कर्तव्य होना चाहिये?"

राम ने उत्तर दिया:—

घर में रह कर भक्ति कर, भक्ति साजा दल साज।
लोक परलोक का जगत में, कभी न होय अकाज॥१॥
भक्ति ग्रहण कर गृही हो, यह गृही का धर्म।
घर वारी गृह धर्म का, यही मुख्य है कर्म॥२॥
गृह मर्यादा त्याग कर, बन में करे जो वास।
आदि अन्त सुग्रीव सुन! वह नर सदा निराश॥३॥
मर्यादा का पालना, उत्तम है व्यवहार।
मात पिता गुरु विप्र का, सदा करे सत्कार॥४॥

"तुम मेरे मित्र बने। मैं तुम्हारा मित्र हुआ। मित्रताई उत्तम मर्यादा है। मैं सब से पहले तुम को बालि के हाथ से छुटकारा दिलाऊँगा। अब और कुछ नहीं। इसके हाथ लड़ने की तय्यारी करो। देखो मैं कैसे अपने एक बाण से उसे जीवन सागर के पार उतारता हूँ।"

सुग्रीव सुन कर प्रसन्न हुये।

सातवाँ समुल्लास

सुग्रीव और बाली की पहिली लड़ाई

सुग्रीव ने बालि को सन्देशा भेजा—"तुम ने मुझे निरपराध मारा, अपमान किया और मेरे प्राण लेने के इच्छुक बने। मैंने भयभीत होकर ऋष्य मूक पर्वत पर आकर शरण ली। घर, बार, स्त्री धन सब कुछ तुम ने छीन लिया। यह भी विचार नहीं किया कि मैं तुम्हारा भाई हूँ। मेरी स्त्री को भी मेरे पास भेज दिया होता तब भी कुछ बात थी। तुमने ऐसा भी नहीं किया। काम के वश में होकर उसे अपने पास रख लिया। अब मैं पहाड़ पर रहना नहीं चाहता। घर आना चाहता हूं। तुम शत्रु हो गये। अब या तो मुझ से लड़ो या इस झगड़े को दूर करके राजकाज में मुझे मेरा भाग दो।"

बालि ने सुग्रीव का सन्देशा सुना। उसी समय पर वह मल्लयुद्ध करने को तैयार हो गया।

तारा उसकी समझदार रानी थी। बालि को समझाने लगी—"सुनो पति! सुग्रीव को जो तुम्हारे साथ लड़ने का साहस हुआ है, उसका कारण यह है कि इसने राम लक्ष्मण का सहारा ले रक्खा है और उनकी शरण में आगया है। वह अपने बल से नहीं बल्कि उनके बल से लड़ना चाहता

है। ये अवधिपति दशरथ नरेश के राजकुमार हैं। सुना जाता है संसार में उनके समान कोई बली नहीं है। तुम इनके सामने न जाओ। इसमें तुम्हारी भलाई नहीं है। मेरा कहना मान जाओ।"

बालि ने उत्तर दिया-'मुझे इन बातों का ज्ञान है। सुग्रीव मुझे लड़ने के लिये ललकारता है। मैं लड़ाई में पीठ नहीं दिखाना चाहता। जिया तो क्या! मरा तो क्या! राम के बाण से मर कर मेरी सद्गति हो जायगी। मैं जानता हूं वह ब्रह्म के अवतार हैं। ब्रह्म के साथ चाहे किसी भी प्रकार का सम्बन्ध हो वह लाभदायक सिद्ध होगा।"

वही है सब, तो उसी के है हाथ सब का निबाह।
और उसके काम की मिलती नहीं किसीको भी थाह॥

तारा को समझाकर सुग्रीव के सामने आया। मल्ल युद्ध के दाव पेच होने लगे—

कभी उसने मारा, कभी उसने झटका।
कभी वह गिरा, और कभी इसने पटका॥
यह था खेल और खेल था सच्चे नटका।
चले दाव पेच और लड़ाकों का लटका॥
था हाथी का बल हाथी लड़ने पर आये।
लड़े और लड़ाई के करतब दिखाये॥

बालि में एक विचित्र आकर्षण शक्ति थी जो साधना करने से नहीं आई थी। स्वाभाविक थी। वह जिसे देख लेता था उसका आधा बल छीन कर अपने में मिला लेता था। आप ड्योढ़ा हो जाता था और दूसरा चौथाई रह जाता था। कहाँ तीन और कहां एक! जब तक आंख से आँख नहीं मिली तब तक कल्याण था और आँखों के दो चार होते ही वह बल में बढ़ जाता और यह घट जाता।

सिंह में, साँप में, चीते में और बिल्ली में यह शक्ति होती है। किसी में कम और किसी में अधिक। इन सब की आखें रात में भी चमकती रहती हैं।

दृष्टि साधन करने वाले मनुष्य इस साधना से अपनी आँख की आकर्षण शक्ति को बढ़ा लेते हैं और उसकी सहायता से उनका दाव दूसरे पर चल जाता है।

सुग्रीव में बल तो था ही, बाली को उठा कर उसने पृथ्वी पर पटक दिया। वह गिरा। उसने उसकी आँखों को देखा, फिर क्या था! इसका आधा बल उसमें समा गया। वह संभल कर उठा। इसे ऐसी पटकनी दी और ऐसा तान कर घूँसा मारा कि वह सहार न सका। किसी प्रकार उठा और बग टट भागा। बाली ने इसका पीछा नहीं किया। और जब तक वह राम के पास नहीं पहुँचा उसे चैन नहीं आया।

दोनों लड़ाके अपने अपने निवास स्थान को चले गये। और पहिले दिन का मल्ल युद्ध इस प्रकार समाप्त हुआ।

आठवां समुल्लास

सुग्रीव और बाली की दूसरे दिन की लड़ाई

सुग्रीव ने राम से कहा—"यह बालि मेरा भाई नहीं है। यह काल है। मेरी मृत्यु इसके हाथ से होगी! देखिये उसने मुझे कैसी मार मारी है। सारा शरीर घायल होगया है और घावों से चूर चूर है। मैं केवल आप के सहारे पर उससे लड़ने गया था, नहीं तो मुझमें इतनी शक्ति कहाँ थी कि मैं इसका सामना करता।"

राम ने उस के घायल शरीर पर दया का हाथ फेरा। तन की पीड़ा जाती रही और उसमें नया बल उत्पन्न हुआ।

रात ज्यों त्यों काटी। प्रातः काल राम ने सुग्रीव से कहा कि—"जाओ आज फिर जाकर लड़ो।"

वह हिचकिचाने लगा। दूध का जला छाछ को फूँक फूँक कर पीता है। बालि के डर का संस्कार उसके नस नस और नाड़ी-नाड़ी में प्रवेश कर गया था।

राम ने ढारस का बल देकर कहा—"घबराओ नहीं। लड़ाई तो तुम को लड़नी पड़ेगी, इससे छुटकारा नहीं है। हां, आज मैं अवश्य अपने बाण से उसे मार दूंगा। कल के दिन मैं बाण नहीं चला सका। उसका कारण यह है कि तुम दोनों भाई एक रूप हो। मुझे धोका हो गया। पहिचान न सका। बाण चलाता तो क्या जाने किसको लगता। इसी असमँजस से मैं रुका रहा। आज मैं तुम्हारे गले में चमेली का हार पहनाये देता हूँ, और वह पहचान कराता रहेगा। इस हार को युद्ध का विजय माल समझो। आज बालि मरेगा। मृत्यु उसके सिर खेल रही है।"

राम ने पुष्पों का हार उसके गले में डाल दिया। "तुम उस की आँख बचा कर लड़ना।"

सुग्रीव हाथ में गदा लेकर कूदते फाँदते हुये उसे ललकारने लगे।

बालि इन के गर्जन के शब्द सुन कर बाहर निकला—"तेरी मृत्यु तुझे घेर घेर कर मेरे पास लाती है। अब तू उस से नहीं बच सकता।"

सुग्रीव बोले—"देखा जायगा।"

दोनों भिड़ गये, पटकम् पटका होने लगी। गदा हाथ में ली। वह बजने लगीं और टूट टाट कर बेकाम हो गईं। तब मल्ल युद्ध में दोनों एक दूसरे के साथ गुथ गये। राम वृक्ष की ओट में थे। देखा कि सुग्रीव के जान जोखिम का समय आ

पहुँचा, तब अपना बाण चला दिया। बालि घायल होकर पृथ्वी पर गिरा और सुग्रीव ने फुदक कर अपना शरीर उस के हाथों की पकड़ से छुड़ा लिया।।

नवां समुल्लास

बालि की मृत्यु

बालि का पृथ्वी पर गिरना था कि राम उसके सम्मुख आकर खड़े हो गये। उसका प्राण निकलने ही को था कि राम का दर्शन पाकर वह रुक गया और उन्हें प्रेम भरी हुई आँखों से देखने लगा। "नाथ! तुमने तो धर्म के हेतु, अवतार धारण किया था। मुझे व्याध बन कर क्यों मारा? क्या यह अधर्म नहीं है?'

राम ने उत्तर दिया—"ऐ बाली! तू महा कामातुर हो रहा था। तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। तेरे लिये ऐसा उचित नहीं था। छोटे भाई की बहू, बेटी, बहिन और बेटे की स्त्री तक का तुझे ध्यान नहीं रहा था। तू आप समझ सकता है कि ऐसा मर्यादा भ्रष्ट जीवित रहने के योग्य है या मरने के योग्य है! मनुष्य का सारा काम मर्यादा के नियमानुसार होना चाहिये। तू जानता था कि मैं संसार में गृहस्थ आश्रम की मर्यादा स्थापन करने को आया हूं। लोग मुझे मर्यादा पुरुषोत्तम कहते थे। मैं तुझे न मारता तो क्या करता! तेरे बाप इन्द्र ने मर्यादा को भंग कर दिया था। तू जानता है गुरु के श्राप से उस की क्या गति हुई! और तू ने भी वही काम किया। जो जैसा करता है वैसा भोगता है। "अवश्य मेव भोगतव्यम् कृत्य कर्म शुभा शुभम्।" जान बूझ कर तूने कुमार्ग पर पग धर रक्खा था। अनजान में कोई काम होता तब भी एक बात थी। तुझ में इन्द्र की बिजली की आकर्षण करने वाली शक्ति अधि-

कता के साथ थी। जिस स्त्री की आँख तुझ से लड़ी वह तुझ पर मोहित हो गई, और जिस पुरुष ने तुझ से आँखें मिलाईं, तूने अपनी आकर्षण शक्ति से उसका आधा बल छीन कर अपने में मिला लिया और उसे परास्त कर दिया। देव, दनुज सब तेरे हाथ से तंग आगये थे। स्त्री और पुरुष अधर्म के पथ पर चल कर त्राहिमान त्राहिमान कर रहे थे। तू अपनी माँ के बाल से उत्पन्न हुआ था, इसलिए तेरा नाम बालि पड़ा। बाल में बिजली की शक्ति बहुत होती है, जैसे मोरपंख के मोरछल या और पशुओं के बालों या सुरा गाय की पूंछ इत्यादि में होती है। यह बिजली की आकर्षण करने वाली शक्ति तेरे रोम रोम में व्याप्त हो रही थी। तूने इससे अनुचित काम लिया और सर्वांग से व्यौहार भ्रष्ट हो गया। अब बता कि मैं तुझे न मारता तो क्या करता! और इस पर भी तू मुझे व्याध की पदवी दे रहा है। तेरी स्त्री ने तुझे कितना समझाया। तूने उसकी भी नहीं सुनी। बता मैंने व्याध कर्म किया है या साधु कर्म किया है। अपने दोष को तो देखता नहीं। मुझे दोष लगाता है।"

पते-पते की बात सुनकर बालि मन में तो लज्जित हुआ लेकिन मरते-मरते भी अपने अहंकार का त्याग नहीं किया। हंसकर बोला—"अन्त मत सो गता।" मरते समय तुमने ऐसे अधम को अपना दर्शन दिया। यह सौभाग्य है या अभाग्य है! क्या तुम में सामर्थ्य है कि इस अन्तिम दर्शन का फल मुझ से छीन सको?"

राम दयालु और कृपालु थे। उसके इस दृढ़ भक्तिभाव के विश्वास को देख कर उसके सिर पर दया का हाथ फेरा। माँग! माँग!! क्या माँगता है!!! क्या मैं तेरे शरीर को अचल करदूँ!

बालि मुस्कराया—"वाह राम वाह ! यह तो तुम ने बहुत अच्छी बात कही ! ऐसा शुभ अवसर अब कब हाथ आयेगा ! जन्म जन्मान्तर मुनि जन जप तप करते रहते हैं और अन्त में तुम्हारा नाम उनके मुँह पर नहीं आता और मेरी क्या दशा है ! मैं मर रहा हूँ और तुम मेरे सामने खड़े हो। तुम्हारी आँखें मेरी आँखों से मिल रही हैं। इस समय मैंने तुम्हारे रूप को अपनी आँखों की आकर्षण शक्ति से अपने हृदय के अंतर में नहीं भरा तो फिर उसका लाभ क्या हुआ ! ऐसे ही मेरे सामने खड़े रहो। मैं तुम को अपने अन्दर भरलूँ और तुम्हारी शक्ति को लेलूँ तब तो मैं बालि हूँ।"

राम ने उसके कोमल हृदय की कठोर वाणी का सन्मान किया। "तू बड़ा चतुर और सयाना है और कुछ कहना है कि बस।"

बाली ने कहा --

अन्त में दर्शन दिया कल्याण मेरा हो गया।
मैं अधम कैसे हुआ निर्वाण मेरा हो गया॥
तुम मिले शीतल हुआ, मैं शांत हूँ निर्भ्रान्त हूँ।
थी इसी की लालसा सम्मान मेरा हो गया॥
चाह और चिंता हटी भक्ति का वर मुझको मिले।
मेरे हृदय में बसो, वरदान मेरा हो गया॥

"अंगद मेरा इकलौता पुत्र है। मैं तो आपकी सेवा नहीं कर पाया। इसे अपना दास बनाइये और सेवकाई का पद प्रदान कीजिये।"

बालि ने फिर वाणी को रोक लिया। राम को प्रेम और भक्ति की दृष्टि से देख कर आंखें बन्द करलीं और चल बसा

दसवाँ समुल्लास

सुग्रीव का राज तिलक

सम्बन्धी, कुल, कुटम्ब और परिवार के लोग आये। रोना पीटना मच गया। तारा उसकी स्त्री आई। पति की लाश पर गिरी। रोई चिल्लाई। दो चार घड़ी का कुहराम मचा रहा।

यह लीला संसार में नित्य नई होती रहती हैं। आने वाला आता रहता है। जाने वाला जाता रहता है। अकेला आता और अकेला ही जाता है। किसी ने आज तक किसी का साथ नहीं दिया। जैसे प्रपंच के सब खेल मिथ्या और कल्पित हैं वैसे ही यह भी है।

यह जगत भूल भुलैयां है। रो पीट कर दो चार दिन के पीछे सब भूल जाते हैं और कोई किसी का नाम तक नहीं लेता।

जाने वाले गये और जिन को था आना आये।
बन के बनठन के बनावट की फबन दिखलाये॥
खेल नाटक का था नट क्रिया का था सांग भरा।
देखने वालों ने जब देखलिया उससे हटे हटवाये॥
इन्द्र का जाल है संसार यह प्रपंच का खेल।
भरमे सब देख के आप औरों को भी भरमाये॥
नाचने गाने की है धूम मची रात दिवस।
कोई नाचा किया और कोई गले से गाये॥
बाजे बजते हैं हंसी खेल है और क्या है यह जगत।
भेद इसका पाये तो गुरू से पाये॥

चर्खी की चोट पर फल धरा है। तोता आया, पावदान पर पाँव रख कर फल पर चोंच मारी। पावदान खिसक गया। चोंच फल तक नहीं पहुँची। वह परों को फड़ फड़ाता है। पाव-

दान के पहियों पर अदल बदल कर पांव जमाता है फल जहाँ का तहां है वहां तक चोंच पहुँचती ही नहीं। और सब उसी का खेल देखते हैं। बन्दर ने बेर के घड़े में मुट्ठी डाल कर पंजे में बेर भर लिये। घड़े का मुँह तँग है। न वह मुट्ठी खोलता है न बन्धन से छूटता है। ऋषि, मुनि, देवी, देवता सब स्वार्थ बस हो कर इस प्रपंच में फँसे हैं। न स्वार्थ सिद्ध होता है न परमार्थ! यह सब के सब इसी झूठे खेल के खिलाड़ी बने हुये हैं।

फँस गया जो फँस गया फाँसी गले में पड़ गई।
सूखी हड्डी को चबाया वह गले में अड़ गई॥
स्वाद हड्डी का जिन्होंने पाया उनसे पूछिये।
जब नहीं निकली गले से हड्डी अड़ कर सड़ गई॥
मर मिटे, की औषधी उससे न निकला कोई काम।
देह मिट्टी में मिली और मिट्टी में गहरी गड़ गई॥
रोने वाले रोते हैं और हँसने वाले हँसते हैं।
बुद्धि कैसी मोह और माया में आकर लड़ गई॥
क्या था और क्या होगया परिणाम इसका क्या हुआ।
सिर कटा चोटी कटी चोटी गई और जड़ गई॥

राम ने यह दशा देखी। सुग्रीव को बुला कर कहा—'जल्दी करो, मरी हुई लाश को हटाओ और झटपट इसे जला कर बालि का अन्त्येष्टि कर्म करो और उसने ऐसा ही किया।

दो दिन का व्यवहार है, झूटा जगत असार।
झूटे सब पितु मातु हैं कुल कुटम्ब परिवार॥
निकला प्राण जो देह से, कैसा किसका प्यार।
एक घड़ी भी नहीं रखा घर से दिया निकार॥
मा रोई रोये सगे रोई तन की नार।
रो रो कर सब हट गये ऐसा है संसार॥

जब दस दिन बीते, महाप्रभु ने सुग्रीव को बुलाया—"मैं चौदह वर्ष तक बस्ती में नहीं जा सकता। पिता की आज्ञा ऐसी ही है। तुम लक्ष्मण को ले जाओ। वह मेरी ओर से तुम्हारा राज तिलक करेंगे और अँगद को युवराज की पदवी देंगे।"

सुग्रीव ने राम का उपकार माना, सिर झुका कर प्रणाम किया, धूम धाम से लक्ष्मण ने उसको सिंघासन पर बिठाया। नगर में धूम धाम मची और सुग्रीव के नाम की बधाई बजी। नगर में उस की दुहाई फिरी। सब लोग चिल्ला चिल्ला कर कहते फिरे—"महाराज सुग्रीव की जय! हमारा राजा सदा चिरंजीव रहे!! लेकिन किस की जय और किसकी पराजय! कौन यहाँ चिरजीव रहा है। हम तो यहाँ पर खुलो आँखों से देख रहे हैं। एक बकरे का सिर काटा। वह मैं मैं करता हुआ बलिदान की वेदी पर चढ़ाया गया। उसके पीछे दूसरा आया वह भी मैं मैं करता हुआ मिमियाता रहा। इसकी भी गर्दन मारी गई। रेवड़ के बकरे मरने के लिये व्याध के यहां जा रहे हैं। राह में मैं मैं करते हुये कामातुर होने का दृश्य दिखाते जाते हैं। उनको सुध नहीं है कि वह मरने जारहे हैं। यही दशा मनुष्य मात्र की है। ये भी काल की वेदी पर बलिदान होने वाले हैं। इनके सिरपर काल मँडलाता रहता है। इनकी चोटी इसके हाथ में है और उसकी तलवार इनकी गर्दन पर है।

मैं मैं करते दिन गया, बुझी न मन की प्यास।
आस आस नर बन्ध रहा, अन्त में चला निराश ॥१॥
आग लपेटी रुई में, सुलग रही दिन रात।
भड़क उठी क्षण एक में, काल की ऐसी बात ॥२॥

रानी राजा राव रँक, मैं मैं के हैं रूप।
मैं मैं करते मर खपे, सब प्रजा और भूप ॥३॥

काल व्याध के हाथ में, सब के सिर के केस।
क्या जाने मारे कहाँ, क्या घर क्या परदेश ॥४॥
मास जला चमड़ा जला, हड्डी हो गई राख।
जर जर कर माटी मिली, क्या जीवन की साख ॥५॥
ऐसी दशा बिचार कर, भज गुरु को दिन रात।
बिनसेगा दिन तीन में, ज्यों तारे परभात ॥६॥
मर मर कर मर जाओगे, जीना मरन समान।
मरने से पहिले मरो, लेकर गुरु का ज्ञान ॥७॥

सुग्रीव की दोहाई फिरी। इनके नाम की बधाई बजी। राम ने अपना बचन सच्चा कर दिखाया। उसे बालि की जगह राजा बना दिया और लक्ष्मण सब कर करा कर नगर से बाहर आये। देवताओं ने कुटी बनाई, चौमासा बिताने का प्रबन्ध किया और ये बन में रहने लगे।

द्वितीय भाग

पहिला समुल्लास

वर्षा ऋतु

नई नवेली सजी सजाई सुन्दर दुलहिन के समान सुहाना बन! दानियों के हृदय के सदृश खिला हुआ मैदान! चारों ओर से बिना किसी रोक टोक के वायु के ठण्डे झोंके बहते थे! घास की चादर पृथ्वी पर बिछ रही थी। धान के खेत पानी से भरे हुये जब हवा के चलने से लहलहाते थे, दृष्टि के सामने हरे रँग के समुद्र के लहराने और उमँड़ने का दृश्य आ जाता था। देवता जानते थे राम चौमासे भर किष्किन्धा

के जंगल में रहेंगे। यह वही जगह है जहां आज कल मैसूर का राज है। बंगलौर के जल और वायु का क्या कहना ! यहाँ सब ऋतुयें एक समान होती हैं। न बहुत गर्मी न बहुत ठँडक ! पृथ्वी उपजाऊ है। नाज अधिकता से उत्पन्न होता है। लोग कहते हैं काशमीर बहुत सुन्दर जगह और पृथ्वी पर स्वर्ग भूमि है। इन लोगों ने दक्षिण देश के इस प्रान्त को नहीं देखा। काशमीर में बर्फ पाला बहुत पड़ता है। कोई घर से बाहर नहीं निकलता। यहाँ की दशा विचित्र है। सब दिन एक समान रहते हैं।

देवताओं ने समझकर एक ऊँचे पहाड़ी टीले पर दो धाम के अच्छे झोंपड़े बना दिये थे। उनके चारों ओर रंग विरँग की फुलवाड़ी लगा दी थी। हरी तरकारियों ने चौरस पृथ्वी पर उनकी शोभा बढ़ा रक्खी थी। जगह जगह पर फूल फल के छोटे छोटे पौधे दक्षिणी जँगलियों के समान खड़े हुये चौकी-दार और पहरे वाले दिखाई देते थे। उस टीले के इर्द गिर्द थोड़ी थोड़ी जगह की दूरी पर कमल के फूल के तालाब रमणीक बन रहे थे और राम उनके जान और प्राण प्रतीत हो रहे थे।

जहां राम का स्थान हो उस जगह का क्या कहना है ! सुन्दरता को सुन्दरता भागई थी और सुन्दरता छाई हुई थी।

प्रातः काल उठकर नित्य नियम के पीछे लक्ष्मण पहाड़ों से जड़ी बूटी खोद कर लाते, आग में पकाकर और कमल के पत्तों पर सजा कर दो पहर पहिले राम के सामने लाकर भेंट रखते। यही उनका आहार था। कभी कभी बन के फूल फल पत्ते भी ला कर देते थे। साय काल दोनों भाई सुथरे चट्टानों पर बैठे हुये पुराणों की कथाओं पर बात चीत करते हुये विचरते रहते थे। देवता भी समय समय पर उनके समीप आकर दर्शन का लाभ उठाया करते थे।

एक दिन तीसरे पहर के पश्चात दोनों अपने अपने झोंपड़ों से बाहर आकर चट्टानों पर विराजमान हुये। राम की दृष्टि वर्षाऋतु की फबन पर गई। लक्ष्मण से कहने लगे-"यह कैसा सुहावना समय है। जिस वस्तु पर दृष्टि पड़ती है, वही हृदय और आँख को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है।"

लक्ष्मण ने कहा -"यह आपके चरणों का प्रताप है। जहां आपका चरण पड़ता है वहां ही सुन्दरता बरस जाती है।"

जहां राम रहते हैं, आनन्द मँगल।
है सुरपुर से भी बढ़कर सुनसान जंगल ॥ १
इधर बादलों की घटा छा रही है।
उधर भूमि फूलों को बरसा रही है। २
घटा काली काली नहीं नभ पर छाई।
तुम्हारी ही छाया गगन जा समाई। ३
उसे साँवले रँग का ध्यान आया।
वही रँग इसने हृदय में बसाया ॥ ४
वही रँग पानी में पानी की धारा।
है यह सांवले रँग ही का पसारा।। ५
यहाँ जो भी हैं सांवले रँग का हैं।
प्रभाव सब आपके सँग का है ॥ ६
हरे पत्तों में साँवला रँग आया।
इसे साँवले रँग की कहिये छाया ॥ ७
तुम्हारा ही है ध्यान सबको यहाँ पर।
वही रंग नीचे वही रंग ऊपर ॥ ८
फबन साँवले रंग की सबको भाई।
बजो नीचे ऊपर इसी की बधाई ॥ ९
पगे आपके भक्ति रस में हैं सारे।
इसी से मुझे आज लगते हैं प्यारे ॥ १०

वही रंग है और वही ढंग सब में।
वही साथ है और वही रंग सब में॥ ११

राम लक्ष्मण की बातों को सुन कर मुस्कराये—"आज तो तुम कवियों के समान छन्द-बद्ध की तुक मिलाने लगे। कहीं कवि तो नहीं बन गये!"

लक्ष्मण मन में लज्जित हुये। उन्होंने अपना हार्दिक भाव प्रगट किया था। राम ने दया का हाथ उनके सिर पर रक्खा और वह लज्जा जाती रही।

दूसरा समुल्लास

वर्षा ऋतु (लगातार)

राम ने कहा—"सचमुच यहां की वर्षा ऋतु बहुत सुहावनी है। इसमें सन्देह नहीं है कि यह बात हमारे 'आर्यवर्त्त' और अयोध्या में नहीं है।"

"काली काली घटायें पृथ्वी पर झुकी हुई वर्षा कर रही हैं और गरज रही हैं। काली काली घटायें मस्त और मतवाले हाथियों के समान आकाश मंडल में झूम रही हैं।"

"वह देखो! मोर पंख फैला कर कैसे नाच रहे हैं। यही दशा ईश्वर के प्रेमियों की भी हो जाती है जब उसकी भक्ति का रत्न इनके हाथ में लग जाता है।"

"यह सब सच है। बादलों की गरज का शब्द सुन कर मेरा कलेजा डर से दहल जाता है। न जाने सीता की क्या दशा होगी।"

"बिजली का कौंधा इधर आया उधर गया। कपटी और छली प्राणियों के प्रेम की भी स्थिरताई नहीं रहती।"

"बादल गर्ज रहे हैं बिजली चमक रही है।
रह रह के वह गगन में पल पल दमक रही है॥
फल फूल और पत्तों से भर गई है डाली।
देखो लचक लचक कर कैसी लचक रही है॥
फूलों की बास फैली बन हो गया सुगंधित।
चम्पा हिना चमेली जूही महक रही है॥"

"वर्षते हुए बादल पृथ्वी पर झुक झुक कर छिड़काव कर रहे हैं जैसे विद्या बुद्धी को पाकर पंडित जन नम्रता से झुकते हैं।"

"पहाड़ इन्द्र वज्र की चोट और बड़ी बड़ी बूंदों की मार को ऐसे सह रहे हैं जैसे संत खलों और दुष्टों के बचन की मार को सहा करते हैं।"

"जिधर दृष्टि जाती है मनोहर दृश्य दिखाई देता है। थोड़ा ही पानी बरसा, नालों तालों और जोहड़ों का पानी उमड़ कर बह निकला। थोड़ा धन पाकर छोटे पात्र वाले धनी इसी प्रकार इतरा जाते हैं।"

"आकाश का शुद्ध पवित्र जल पृथ्वी पर गिरते ही उसके मैल से मैला और गन्दा हो गया। ऐसे ही जीव माया की लपेट झपेट में आकर अपनी शुद्धताई खो बैठता है और कुछ का कुछ हो जाता है।"

"तालाबों में पानी चारों ओर से सिमट सिमट कर चला आ रहा है। इसी प्रकार अच्छे प्राणी अच्छी संगत में आकर अच्छे अच्छे गुणों को प्राप्त कर के उन से भर जाते हैं।"

"कमल के पत्तों पर पानी की बूंद उज्वल मोतियों के समान चमक रही है और बादल के पानी से यह पत्ते नहीं भीगते। ऐसे ही जीवन-मुक्त दशा में रहने वाले ज्ञानी मोह माया की सामिग्री रखते हुये भी उस से अलग थलग रहते हैं।"

"देखते देखते बल्लियों पानी बरसा। सब खेत और जँगल के वृक्ष उस में डूब गये, लेकिन कमल की नली ऊपर तैरती दिखाई दे रही है। हजारों गज पानी बरसे, वह कमल को नहीं डुबा सकता। भक्तों की भक्ति की भी यही दशा होती है। इनका प्रेम बढ़ता ही चला जाता है घटने पर नहीं आता।"

"घटे बड़े दिन एक में, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम हृदय बसे, प्रेम कहावे सोय॥"

"पानी बरसा बाढ़ आई। गांव के गांव बह गये। पहाड़, टीले, बन सब डूब गये, लेकिन समुद्र जैसे का तैसा ही है। न बढ़ा न घटा न इतराया न उतराया। ईश्वर के भक्तों का हृदय ऐसा ही गहरा होता है। वह भरे का भरा रहता है। भरो तो भरता नहीं, घटाओ तो घटता नहीं।"

"वह देखो – पनडुब्बी (जल पक्षी) बार बार पानी में गोते खाती और ऊपर आती है। उसके पँख नाम के लिये भी नहीं भीगते, यों ही सन्त जन भवसागर में रहते हैं और इसके माया का जल उन्हें न तर करता है न डुबा सकता है।"

"नदी और नालों का पानी समुन्दर की ओर बहता हुआ चला जा रहा है। उसे भी स्थिरता वहां आती है। भक्त जनों का उमड़ता हुआ हृदय भी ब्रह्म के अथाह सागर के ध्यान में गिरता पड़ता चला जारहा है और उसी में सच्ची शान्ति पाता है।"

ऐ लक्ष्मण! पस वर्षा का ऋतु दर्शकों के हृदय के उभारने की विचित्र सामिग्री अपने साथ रखता है और नये नये विचार जनक और विवेक वर्द्धक दृश्य दिखा दिखा कर नये नये उपदेश देता रहता है।"

"वेद की पोथी है जग, इसको पढ़ै ज्ञानी कोई।
योग की युक्ति को देखैं, सोच कर ध्यानी कोई॥
जल बढ़ा डूबे सभी, पर्वत पहाड़ और बस्तियां।
डूबते हैं ऐसे ही भव, निधि में अज्ञानी कोई॥
आज है बस्ती तो कल उजड़ी वही बहुवृष्टि से।
शिक्षा ले वर्षा से आकर मानी अभिमानी कोई॥
मर रहे हैं मरने वाले जल की वृद्धि से यहाँ।
पानी सर पर आ गया है देखें अनुमानी कोई॥
लाखों बातें सीख लो संसार के व्योहार में।
क्या चितायेगी अधिक इस वाणी से वाणी कोई॥
वृक्ष डूबे डूबे वन, तरते हैं तिनके घास के।
तारने तरने का ले यह भेद निर्वाणी कोई॥
वेद है यह जग की पोथी पोथी है ज्ञानेश्वरी।
भेद ले इस ग्रन्थ को पढ़ पढ़ के नर ज्ञानी कोई॥

"मेंढकों की बड़बड़ाहट और तड़तड़ाहट में वेद-पाठी विद्यार्थियों के कंठाग्र करने का शब्द गूंज रहा है।"

"पानी बरसा। सड़कें बिगड़ीं। पगडंडियों के चिन्ह मिटे। रास्ते की लकीरों को घास फूस के बढ़ जाने ने छुपा दिया। ऐसे ही जब संसार में पाखंड बाद की वृद्धि होती है, सद् मार्ग, सद् पंथ और सद् धर्म गुप्त और लोप हो जाते हैं। रास्ता नहीं मिलता। कोई चले तो कैसे चले और किस पर चले!"

"पानी पाकर पृथ्वी में दबे हुये बीज अंखुआये। नई, नई कोपलें फूटीं, गाछ बढ़े और बढ़ चले। देखने में बहुत शोभा-यमान लगते हैं। ऐ लक्ष्मण! यों ही जब कोई पुरुष सन्त जनों की संगत में जाता है उनके प्रभाव शाली बचनों का पानी पाकर इसके दबे हुये आत्मिक संस्कार और अधिकार जाग

उठते हैं और वह देखते देखते कुछ का कुछ बन जाता है। इसका हृदय निखार पर आता है। जीवन में परिवर्तन हो जाता है। साधक का साधन साधना का फल लाता है और वह साधक सिद्ध हो जाता है।"

"वर्षा आई। जवासा, आक आदि के पत्ते गल गये। ढूंढो और वह नहीं मिलेंगे। ऐसे ही जब सुराज्य का समय आता है, विद्या, बुद्धि, कला कौशल, ज्ञान ध्यान, न्याय, धर्म की वृद्धि होती है, मूर्खता का नाश हो जाता है और प्रजा सुखी हो रहती है।"

'पानी पोटा, मिट्टी कीचड़ हुई। पानी बढ़ा, धूल और राख का न कहीं नाम है न निशान है। लाख ढूंढो वह न मिलेंगी। ऐसे ही जब किसी में क्रोध का अंग बढ़ जाता है तो धर्म उससे कोसों दूर भाग निकलता है। क्रोध आया और धर्म गया। न्याय जाता रहा, पक्षपात ने डेरा डाला। अब सार तत्वों को बूझे तो कौन बूझे।'

'क्रोध आया धर्म की हानी हुई।
पक्ष आया न्याय की हानि हुई॥
दीनता भागी हृदय छाया घमंड।
भाव अहं का होगया अति प्रचंड॥
दान का कोसों पता मिलता नहीं।
कृपणता का भाव अब हिलता नहीं॥'

"आकाश मंडल निर्मल हुआ। बादलों का जमघट नहीं रहा। चाँद की चाँदनी चटकी और वह कैसी शीतल और आनन्द दायक लगती है, जैसे परोपकारी का धन जहाँ जहाँ जाता है अपने चारों तरफ सुख और शान्ति को बखेरता रहता है।"

'जब घटा टोप अंधेरा छा जाता है, इधर उधर छोटे २

दुर्गन्धि फैलाने वाले जुगुनू अपनी चमक दमक की लीला दिखाते फिरते हैं; वैसे ही जब धर्म गुप्त हो जाता है वाचक ज्ञानी पाखंडी संसार में बढ़ जाते हैं। करना धरना कुछ नहीं–'अहम् ब्रह्म' 'अहं ईश्वरम्' 'अहं शिवम्' का पाठ सुनते सुनाते लूट मार मचाते हुये घूमते फिरते हैं। इनके यहाँ भक्ति मिथ्या और जगत् मिथ्या माने जाते हैं। जब सब मिथ्या ही मिथ्या है तो धर्म मिथ्या, कर्म मिथ्या, मर्म मिथ्या हो गये। करना धरना क्या रहा! हां! एक बात यहां नहीं है और वह खीर पूरी है। इन्हें खिलाते पिलाते रहो।"

"बर्षा हुई। खेत बिगड़े। क्यारियां फूट फूट कर बह निकलीं। यह झूठी सभ्यता के समान है। परतंत्रता से चिढ़ और स्वतन्त्रता का अभिमान आ गया। स्त्रियाँ थोड़ी बहुत पढ़ लिख गईं। अब पति पति नहीं, और पत्नि पत्नि नहीं। पति क्या हुआ? पशु। रात दिन बैल के समान कमाई करे। घास फूस रूखा सूखा खाये। सब पत्नि की भेंट हो। वह संवार सिंगार में लगी रहे। पति बोला नहीं कि यह उसकी गर्दन पर सवार हुई नहीं। पशु तो पशु! उसे तो बोलने का क्या अधिकार है। और पत्नि क्या हुई? घर की मालिक। वह जो कहे वही हो। 'पति बेदामों का नौकर! रात दिन पत्नि की कटी, जली, बुरी भली सुनता रहे। सिर हिलाया और उसकी मृत्यु आ गई।"

'ऐ लक्ष्मण! तुम ऋष्यमूक पर्वत से होकर आये हो। चुपकी साध कर बैठा रहना पति का काम हो जाता है। बेचारा क्या करे! इतना तो समझ गया कि एक चुप सौ बला को टालती है। स्त्रियों की यह घृणित स्वतन्त्रता गृहस्थियों के सुखों का नाश कर देती है!'

"वर्षा की ऋतु में स्याने किसान अपने बोये जोते हुये खेतों की नराई करते और घास फूंस काँटे कटीले निकाल निकाल कर फेंक देते हैं क्योंकि वह नाज के पौधों की वृद्ध में हानि कारक होते हैं। यों ही ऐ लक्ष्मण! सतसँगत करने वाला सतसङ्गी भी एक प्रकार का किसान ही है। खेत उसका हृदय है। गुरू का सँस्कार बीज है। बचनों के श्रवण मनन में खेतों का जोतना है। खेत जोता गया, इसमें बीज पड़ गया, अँखुये आने लगे। ये अँखुये विचार विवेक हैं। अब सतसङ्गी इनकी सहायता लेकर काम क्रोध लोभ मोह अहँकार के कांटे कटीले और घास फूंस बाहर निकाल निकाल कर फेंकता रहता है। भक्ति के सँस्कार पौधा बन कर बढ़ते हैं। इसमें साधना के फूल लगते हैं जो देखने में दृष्टि प्रिय और रँग बिरँगे होते हैं और फिर इन में सिद्धि के फल आने लगते हैं।"

सतसँगत मुद मंगल मूला।
सोई फल सिद्धि सब साधन फूला॥

"वर्षा ऋतु के अन्त में चकोर आदि पक्षी दूसरे देशों को चले जाते हैं। ऐसे ही कलयुग के आते ही धर्म की यही दशा होती है।"

'लाख पानी बरसे। ऊसर में घास तक नहीं उगती, जैसे हरि के भक्तों के हृदय में काम का अँकुर नहीं जमता।'

"अच्छी उपजाऊ पृथ्वी हरियाली से भर जाती है जैसे स्वराज को पाकर उजड़ा हुआ देश बस्ती के रूप में विद्यमान हो जाता है।"

"चौमासा आया। रात के समय फिर मुसाफिर राह नहीं चलते। कहीं न कहीं ठहर जाते हैं। वैसे ही ज्ञान की प्राप्ति होने से मन और इन्द्रियाँ भी चलायमान नहीं होतीं। इनकी रोक थाम आप ही हो जाती है।"

'कभी कभी वर्षात में जब प्रचँड वायु बहती है, बादलों का समूह छिन्न भिन्न हो जाता है। यह वैसे ही है जैसे किसी कपूत के उत्पन्न होते ही घराने बिगड़ जाते हैं और उनकी धन सामिग्री का पता तक नहीं रहता।'

'बरसात में कभी गर्मी है कभी सर्दी है कभी अन्धेरा है कभी उजाला है। सुसंग और कुसँग के मिलने से इसी प्रकार ज्ञान का नाश और उसकी उपलब्धि होती रहती है।'

'ऐ लक्ष्मण! विचार करने से हमको इस प्रकार इस ऋतु से ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।'

आँख वाला जब मिले, दर्पन दिखाना चाहिये।
तत्व अधिकारी ही को, साधन बताना चाहिये॥
जब नहीं अधिकार निष्फल, फिर तो सब उपदेश है।
इन से गुरू के भेद को, निश दिन छिपाना चाहिये॥
पंथ में आकर जो पंथाई बने, पथ पर चलो।
जो हैं भूले रास्ता, उनको जताना चाहिये॥
क्या सुना कर हम करें श्रुति, स्मृति का रहस्य।
सुनने वाला जब न हो, किसको सुनाना चाहिये॥
धर्म में है अर्थ और इस धर्म में है काम मोक्ष।
धर्म का इच्छुक मिले, उसको चिताना चाहिये॥

तीसरा समुल्लास

शरद ऋतु

भारत वर्ष में छः ऋतु होती हैं—बसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेम।

वर्ष में बारह महीने होते हैं और प्रत्येक ऋतु दो दो महीने रहती है। चैत बैसाख बसंत ऋतु है। यह ऋतु सबसे अच्छा समझा जाता है। न बहुत गर्म न बहुत ठंडा। जेठ

अषाढ़ ग्रीष्म ऋतु के महीने हैं जिनमें गर्मी पड़ती है। सावन भादों वर्षा ऋतु कहलाते हैं जिनमें पानी बरसता है। क्वार कार्तिक शरद् ऋतु कहलाते हैं जिनमें बहुत ठंडक है न गर्मी है। अगहन पूष शिशिर ऋतु है इनमें विशेष ठंडक पड़ती है। माघ फागुन हेम ऋतु है जिनमें ठंडक कम हो जाती है। राम लक्ष्मण चौमासे के दिनों में किष्किन्धा में पहुंचे थे। अषाढ़ सावन भादों क्वार चौमासे में हैं।

वर्षा ऋतु के दो महीने गये, शरद् ऋतु आया। राम और लक्ष्मण ने दो महीने झोंपड़े में रह कर बिताये। उनकी दिन-चर्य्या साधारण थी और यह दोनों एकान्त सेवन में रहे। लोगों से मिलने मिलाने का अवसर कम था। देवता लोग निसन्देह उनके पास रहते थे।

जब कभी आकाश मंडल निर्मल होता तो यह कुटी के बाहर आकर कथा पुराण की बातें करते, नहीं तो इसके भीतर रहते।

वर्षा ऋतु के अन्त होने पर एक दिन दोनों भाई फिर पथरीले चट्टान पर बैठे हुये इर्द गिर्द के दृश्य को देख रहे थे।

राम ने कहा—'वर्षा ऋतु गया। शरद ऋतु आ गया। वर्षा के बुढ़ापे में शरद ऋतु उत्पन्न होता है। वह गया। यह आया। प्रकृति में आने जाने का तार यों ही बँधा रहता है।'

लक्ष्मण–'और यह प्रबन्ध जोड़े के साथ रहता है।'

राम—'होना भी ऐसा ही चाहिये। यह जगत है क्या? यह पुरुष और प्रकृति का विलास स्थल है। यहां तुमको कोई पदार्थ ऐसा न मिलेगा जो जोड़ा रहित हो। शरीर के अंग चोटी से लेकर ऐड़ी तक दो दो हैं—दो खोपड़ी, दो माथे, दो कनपुटी, दो भौंयें, दो आँख, दो छाती, दो हाथ, दो पांव आदि। इन में से कोई भी तो अकेला नहीं है। सब के सब

दुकेले और जोड़े जोड़े हैं।'

लक्ष्मण—'और यह जोड़ा बीच से जुड़ा हुआ है। जहाँ एक ही अंग का अनुमान होता है, वहाँ यह जोड़ा बीच से जोड़ दिया गया है जैसे हमारी जिह्वा-यह अकेली नहीं दो है, बीच से जुड़ी हुई है। आंख नाक आदि सबकी यही दशा है।'

राम—'इस जगत में हर जगह द्वन्द ही का प्रबन्ध है। दो तत्व न होते तो रचना असम्भव होती।'

लक्ष्मण—'आप तो अद्वितीय हैं आपका जैसा दूसरा कोई नहीं है। और न कोई आप जैसा है।'

राम—'और तुम आप क्या हो! जगत में जाकर ढूंढो तो सही। तुम जैसा कोई और भी लक्ष्मण है या नहीं है। तुमको अपना दूसरा या अपने जैसा कहीं कोई न मिलेगा। यह भी प्रबन्ध है। एक वृक्ष के दो पत्ते, एक शाखा के दो फल, एक फूल की दो पँखड़ियां, एक पँखडी के दो अंगों को कहीं भी एक समान न पाओगे। कोई भी वस्तु ले लो। पानी की दो बूँदें, मिट्टी के दो ढेले, तुमको इस जगत में एक जैसे न मिलेंगे।'

लक्ष्मण—'इसका कारण?'

राम—'इसका कारण यह है कि तत्व एक है और इसी को सब में दोहराया गया है। मुर्गी की यही एक टाँग! इसी दृष्टि से कहा गया है, एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति।'

लक्ष्मण—'प्रभो! अभी अभी आपने कहा है कि यहाँ सब का जोड़ा है और इस समय कह रहे हैं कि यहां जो है वह एक ही है और अकेला है।'

राम—'वह और दृष्टि से है और यह और दृष्टि से है।'

लक्ष्मण—'वह क्या दृष्टि से है?'

राम—'जोड़ा कहते हैं, सामने वाले को और जिसका सामना किया जाये। वह आमने या आमना कहलाता है।

आमने सामने का शब्द इसी उपेक्षा से है और इसी आमने सामने का नाम जोड़ा है। जैसे बिम्ब और प्रतिबिम्ब, दर्पण और दर्पण की छाया। यह जोड़ा है और यह जोड़े साथ रहते हैं। जोड़ा न होता तो रचना न होती। इन दोनों बातों में केवल दृष्टि, दृष्टि का भेद है और दृष्टि ही से सृष्टि है।'

लक्ष्मण—'बात मेरी समझ में आगई। इसका रहस्य, सत, असत्, पुरुष प्रधान, बिम्ब प्रतिबिम्ब आदि परिभाषाओं में छिपा हुआ है।'

चौथा समुल्लास

शरद् ऋतु लगातार

राम—'युवा और बुढ़ापा सबके लिये है। जो युवा हुआ है वह कभी न कभी समय पाकर बुड्ढा हो जायगा। दिन रात जवान बूढ़े होते हैं। पक्ष और मास भी इसी नियम के आधीन हैं। कल्प कल्पान्तर युग युगान्तर सब इसी के आधीन रक्खे गये हैं। यह प्रवाह यों ही चला करता है। यह काल के चक्र से भी परे रहता है।'

'वर्षा गई। शरद् आया। कांस के श्वेत फूलों की नई नई ढूँडियाँ वर्षा की दाढ़ी बन कर उसकी अन्तिम अवस्था का दृश्य दिखला रही हैं। बुढ़ापे में बूढ़े की उजली दाढ़ी हिला करती है। हवा के झोंके पाकर काँस के फूल भी वैसे ही हिल रहे हैं।'

'आकाश में अगस्त्य तारा उदय हो आया। नदी नाले डहरीले ताल जितने पानी से भरे हुये थे सूखने लगे। जब किसी के मन में संतोष आ जाता है तो लोभ सूख जाता है।'

'वर्षा ऋतु में पानी गदला और मटमैला था। अब वह थिरा कर शुद्ध और निर्मल हो गया है। लोभ मोह का गन्दा-

पन इसी समान सन्तों के हृदय से शान्त होते ही दूर हो जाता है और इस में गंभीरता आजाती है।'

'वर्षा का पानी यकबारगी नहीं सूखता। वह भी कुछ समय लेता है। यह रिस रिस कर या तो पृथ्वी में समा जाता है या आकाश मंडल से मिल रहता है। यों ही ज्ञानियों के हृदय की ममता जल्द दूर नहीं होती। उन्हें भी उसके लिये साधन और अभ्यास करना पड़ता है।'

'शरद् ऋतु के आते ही खिड़ाच व पत्ती आ गये। यह वर्षा ऋतु में भागे भागे फिरते थे। अच्छा समय पाया। आ गये। मनुष्य अच्छे कर्म करता है उसे सुकृति और यश भी समय पाकर मिलते है।'

'धूल मिट्टी और गर्द दब गये। पृथ्वी निर्मल और सुथरी प्रतीत होने लगी। इसी प्रकार जो राजा नीति और बुद्धिमानी से राज काज का प्रबन्ध करता है, उस देश के उत्पात दब जाते हैं।'

'पानी कम हो गया। छोटे छोटे तालाबों की मछलियाँ घबड़ा घबड़ा कर तड़प रही हैं। यही दशा उस अज्ञानी गृहस्थी की भी होती है जिसकी आमदनी कम हो गई और निर्धन बन गया।'

'आस गले की फाँस है। जैसी आसा वैसी वासा, आशा वाला पुरुष निराश! जब आशा की जड़ कट जाती है भक्तों के हृदय वैसे ही निर्मल हो जाते हैं, जैसे इस समय बादलों से खाली आकाश निर्मल दिखाई दे रहा है।'

आस आस जग बंध रहा, आस आस लिपटाय।
गुरु आसा पूरी करें, सकल आस मिट जाय ॥१॥
आसा दुख का मूल है, मन को करे मलीन।
आसा तृष्णावन्त जो, सदा हृदय का हीन ॥२॥

चाह मिटी चिन्ता गई, दुविधा भागी दूर।
अब उसको क्या चाहिये, हो रहा चित भरपूर ॥१॥

'कहीं कहीं कभी कभी थोड़ी थोड़ी वर्षा से सर्दी हो जाती है। यह दशा उन प्रेमियों की है जिनको मेरी कुछ कुछ भक्ति मिल गई है।'

'वर्षा ऋतु के समाप्त होते ही राजा, ब्योपारी, भिकारी नगर से निकल कर अहेर, बंज और भीख के ब्यौहार में लगते हैं। हरी के भक्तों को जब भक्ति का धन मिल जाता है वह भी इसी प्रकार चारों आश्रम ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास को छोड़ छोड़ कर एक भक्ति का सहारा लेकर विचरते हैं।'

'जहाँ गहरा और अथाह पानी भरा रहता है वहां मछलियाँ सुखी रहतीं और सुख में रहती हैं। इनकी दशा उन भक्तों के समान है जो हरि की शरण में आकर माया की नाना प्रकार की उपाधियों से मुक्त हो गये।'

एक भक्ति की शरण में, मिटा उपाधी दोष।
अब किस की आसा करूँ, किसके ऊपर रोष ॥
काम क्रोध मद लोभ के, छूटे सकल विकार।
चरण कमल हरि की शरण, हो गया बेड़ा पार ॥

'अहा! देखो कुटी के इर्द गिर्द के तालाब, खिले हुये कमल के फूलों से भरे हुये कैसे शोभायमान हो रहे हैं! यही दशा निर्गुण ब्रह्म की हो जाती है जब वह सगुण रूप में प्रगट हो जाता है।'

कारण बीज से वृक्ष हो, फूला फला सुहान।
अब देखो स्थूल में, कारण शोभामान ॥
सुषुप्ति दशा से क्या बने, समझ न आवे ज्ञान।
जागृत में उसकी दशा, परखे पुरुष सुजान ॥

'पक्षी चहचहा रहे हैं। पपीहा पी पी कर रहा है। भौंरे गुंजार रहे हैं। कोयलों की कू कू की कूक से पहाड़, ऊमर, बन गुंज उठे हैं। चकोर को वैसा ही दुख हो रहा है जैसे बुरे लोग औरों की धन सम्पत्ति को देख कर यों ही दुखी होते हैं।'

'अहा ! यह ऋतु कैसी सुहावनी है ! न इसमें बहुत सर्दी है न गर्मी है। गर्मी और सर्दी दोनों एक समान हो गये हैं। इसने तो संत के दर्शन का प्रभाव दिखा दिया। संतों के मिलाप से पातक और तीन तप भाग जाते हैं जिस तरह शरद ऋतु में गर्मी सर्दी समान हो जाती है।'

सुख सन्तों के दृश में, और कहीं सुख नाहिं।
जिसे हो सुख की चाहना, जाय हों संत जहां॥
सुख देवें दुख को हरें, मेटें सकल उपाध।
ऐसे हरि जन कब मिलें, परम सनेही साध॥

'रात के समय चकोर चन्द्रमा को यकटक हो कर निरखता रहता है। ध्यानी भक्त उसी प्रकार इष्ट के सरूप में मन बुद्धि चित्त और अहंकार को एकाग्र किये हुये उसी की ओर टकटकी लगा रखता है।'

ध्यान है मन की धारणा, किया ध्यान मन साध।
चित्त बसा गुरु चरण में, सुरत हुई बिस्माध॥

'मच्छर और पिस्सू इस ऋतु में उसी प्रकार नाश हो जाते हैं जैसे विघ्न, हरि जन और भक्तों के द्रोही देखते देखते लोप हो रहते हैं।'

'वृक्ष लह लहा उठे हैं। घास की हरियाली पृथ्वी पर आप दौड़ रही है यों ही जब सौभाग्य के उदय होने से गुरु की प्राप्ती हो जाती है तो सब संयम नियम आप ही आप बिना किसी परिश्रम और जतन के इकट्ठे हो जाते हैं।''

गुरु मिले सब कुछ मिला, अब कुछ रही न आस।
मनसा वाचा कर्मणा, सेवक स्वामी पास॥

गुरु मिले शीतल हुआ, मिटी मोह तन ताप।
दुख कलेश व्यापे नहीं, अब गुरु आये पास॥

पाँचवाँ समुल्लास

राम की बेचैनी और किष्किन्धा में बेकली

राम बोले—'ऐ लक्ष्मण! वर्षा गई, शरद् ऋतु आया। अब तक सीता की सुध नहीं मिली। कौन जाने वह मर गई या जीती है। सुध मिल जाय और इतना पता लग जाय कि वह अब तक जीती है तो मैं उसके लिये काल से लड़ झगड़ कर उसे फेर ला सकता हूं। वह जीती हो तो तुम जाओ और खोज लगा कर ले आओ।'

लक्ष्मण—'जो आज्ञा।'

राम—'सुग्रीव ने मुझे भुला दिया। राज पाट धन संपत्ति स्त्री, प्रजा उसे सब सहज में मिल गये। यह नहीं समझता कि जिस एक बाण से मैंने बालि को मारा है उसी से उसे भी मार सकता हूँ।'

लक्ष्मण ने देखा कि राम सीता के वियोग में बेचैन और सुग्रीव के कर्तव्य से क्रुद्ध हो रहे हैं, यह क्रोधातुर होकर उठे। हाथ में धनुष बाण।

राम ने कहा -'तुम जाओ। सुग्रीव फिर भी मित्र है उसे भय देकर मेरे पास लाओ, तब उसको समझा दूं।' लक्ष्मण ने अकेले हाथ में धनुष बाण लिये हुये किष्किन्धा नगर की ओर पाँव बढ़ाया।

नगरवासियों ने दौड़ कर सुग्रीव को सूचित किया कि लक्ष्मण आरहे हैं। यह पहिले ही से विकल थे। दो ही चार दिन हुये होंगे कि हनूमान ने सुग्रीव को चिताया था—'तुम भूल गये। राम के उपकार को नहीं माना! राग रँग में मस्त

पड़े हो। वहां क्या कह आये थे, यहां क्या कर बैठे! सीता की खोज की चिन्ता चित से चली गई" सुग्रीव को चेत आया और उसी समय बन्दरों को उत्तर, दक्षिण, पूरब, पच्छिम भेजा कि सीता की खोज लावें।

यह प्रबन्ध हो ही रहा था कि लक्ष्मण किष्किन्धा में आये। लक्ष्मण क्रोध में थे। वहाँ पहुँच कर बन्दरों से कहा—"तुम कृतघ्न हो। मैं अभी तुम्हारे नगर को जला कर धूल मिट्टी किये देता हूँ।"

सब के सब डरे हुये थे। किसी को साहस नहीं हुआ कि उनके पास आये। बाली के लड़के अँगद ने यह दशा देखी। आया और लक्ष्मण के पावों पर अपना सर रख दिया। लक्ष्मण ने कहा—"अभय रहो।" सुग्रीव असमँजस में था। हनूमान से कहा—"तुम तारा को साथ ले जाओ, समझाओ, बुझाओ, लक्ष्मण की क्रोधाग्नि को ठन्डा करो।"

यह दोनों आये, दण्ड प्रणाम किया और विनती करके राज महल में लाये। सुग्रीव ने स्वागत किया। चरणों में झुका। लक्ष्मण ने उनको छाती से लगाया।

सुग्रीव बोले—"प्रभो! मैं बन्दर का बन्दर हूँ। प्राकृतिक प्रबन्ध ने मुझे बन्दर का रूप दिया। बन्दर चँचल होता है। वह विषयासक्त रहता है। स्वार्थी होता है। मैं आपको भूल गया। इसमें आश्चर्य की कौनसा बात है। जो जैसा है वैसा ही करेगा। हां! आप अपने सेवकों को भूल जायें तब निःसंदेह आश्चर्य होता है।"

जो मैं भूला भूल से, भूल है मेरा स्वभाव।
तुम भूले अचरज महा, छोड़ा अपना प्रभाव॥
तुम से गुन मैं औगुनी, अधम विषय लवलीन।
मेरा इसमें दोष क्या, मैं नहिं चतुर प्रवीण॥

बन्दर चँचल बुद्धिगति, उछल कूद से काम।
तुम नर नारायण दोऊ, अविषय और अकाम॥
तुम नर बानर में बना, नर बानर में भेद।
बानर-नर के है सदृश, वरणें चारों वेद॥
दया, क्षमा, करुणायतन, यह है आपका रूप।
मैं प्रजा हूं आपका, आप हमारे भूप।

लक्ष्मण सुग्रीव के रहस्य मय वाणी को सुनकर हँस पड़े। सुग्रीव का अभय दान देकर साथ लिया और वहां आये जहां राम कुटी के एकान्त में बैठे हुये इनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

तृतीय भाग

पहिला समुल्लास

सीता जी की खोज का प्रबन्ध

सुग्रीव व्याकुल होकर चरणों में पड़ा—'नाथ! मैं बानर हूँ। नर नहीं हूं। केवल नर के सदृश कहा जाता हूं। पशु का विकार, नर का आकार! द्वन्द स्वभाव वाला! मोह माया में फँस कर विकारी पशु बना। नर के आकार का ध्यान भूला! आकार निर्बल और विकार प्रबल है। मेरा क्या दोष है! दोष होगा तो आपकी माया का होगा। बन्दर को माया नचाती रहती है। यह क्या करे। नाचता रहता है। हाँ! आपकी दया हो तब तो इस माया जाल से छूटना सम्भव है। नहीं तो यह बँधे का बँधा बन्धनासक्त है। आपका बन्दर बँधा हुआ दरबार में उपस्थित हैं। जो आज्ञा इसे होगी, सर से आँख से सेउ पालन करेगा।'

इस नर और बानर की रहस्य मय वाणी सुन कर राम मुस्कराये। सुग्रीव भय बस कांप रहा था। "सुनो सखा! तुम मेरे मित्र हो। काँप रहे हो। इसी कपकपी और काँपने के स्वभाव से बानरों का नाम 'कपि' पड़ गया। अब कांपने का काम नहीं रहा। बानर हो तो मुझ जैसे नर के बल का सहारा लो और बलवान हो जाओ।"

सुग्रीव—"भगवन! आप को मैं नर नहीं कहता। आप नारायण हैं। यहां केवल एक नर है और वह लक्ष्मण हैं। नर कहते हैं नरों (मनुष्य) के समुदाय को, और अयन कहते हैं घर को, जो नरों के समुदाय का घर हो, वह नारायण है। जैसे समुद्र में अनगनित बूँदें रहती हैं, वैसे ही आप में यह सारे नर बसते हैं और सब कपि (कांपने वाले बन्दर) केवल बानर हैं जिनका आकार मात्र नर का है। एक नर (लक्ष्मण) किष्किन्धा गया और सारे बानरों को बाँध लाया। नर ही बानरों को बाँध कर नारायण के चरणों में लाकर झुका देता है।"

राम हँसे—"सुग्रीव! तुम मुझे नारायण कहते हुये नरों का घर बताते हो। मैं तुम्हें बानर कह कर क्यों न नारायण कहूँ। तुम भी तो बानरों के समूह के घर हो। तुम्हारे साथ अनगनित बानर (नर सदृश या नर के आकार वाले) हैं। अब ये बातें ज्ञानियों और ध्यानियों को लिये छोड़ो। मुझे केवल सीता की पुनर्प्राप्ति का ध्यान है। यह काम केवल बानर ही कर सकते हैं। यह औरों के बूते का नहीं है। मैंने इसे अच्छे प्रकार समझ बूझ लिया। तुम भी अब अपने स्वरूप का विचार करके उसमें स्थित हो जाओ। और चित्त की शक्तियां

एकाग्र करके सीता की खोज में लगो। इसमें मेरा काम और तुम्हारी भलाई है।"

सुग्रीव—"एवमस्तु।

दूसरा समुल्लास

बानर कटक (बन्दरों की पलटन)

सुग्रीव उठे, किलकिलाये, घोर शब्द हुआ और शब्द की पुनरावृत्ति चहुँ ओर गूँज उठी। इसे सुनते ही लाखों बन्दर झाड़ियों, बनों, पहाड़ों, बस्तियों और ऊजड़ों से निकल कर कूदते फांदते हुये आये और राम के इर्द गिर्द आकर खड़े हो गये। इस पल्टन में केवल बन्दर ही नहीं थे बल्कि रीछ भी थे। रीछ और बन्दरों में क्या उपेक्षा है, इसे रामायण का रहस्य समझो और वह धीरे धीरे उसे खोलती चलेगी।

राम और सुग्रीव दोनों बन्दरों की सैना को देख कर प्रसन्न हुये।

बन्दर और रीछ पहिले तो दोनों आकर खड़े हुये। पीछे अपनी प्रकृति अनुसार हिलने डोलने, चलने फिरने और उछ-लने कूदने लगे।

कोई कूदता था कोई फाँदता था।
उछल कर कोई फिरता और नाचता था॥
उछल कूद में फाँदने में थे योधा।
स्वभाविक था गुन, मन को साधा न सोधा॥

राम ने फिर वहाँ विचित्र माया की। पहिले तो सुग्रीव ने सबको चुप कराया। फिर राम ने सब पर दृष्टि डाली, सबसे कुशल पूछी और इन सब के सब को विश्वास हो गया कि राम सब से मिले और सब पर दयालु थे।

जब यह हो चुका, सुग्रीव ने अपनी वृन्द सेना चंचल (बन्दर) और मूढ़ (रीछ) को यह आज्ञा सुनाई—"तुम सब के सब चारों दिशाओं में जाओ, पूछो, गछो, सीता का पता लगाओ कि यह कहाँ है? कौन लेगया है? और किस जगह ले जाकर छुपा रक्खा है। तुम आने में देरी न लगाना। एक पक्ष में लौट कर आजाना। नहीं आये तो फिर तुम्हारी कुशल नहीं है।"

बन्दर और रीछ सब तितर बितर हो गये। कोई पूर्व को गया। कोई पश्चिम उत्तर और दक्षिण को और कोई कोई समूह दिशाओं के कोनों की ओर पधारा।

इनके चले जाने पर अन्त में सुग्रीव ने अंगद हनूमान, नल नील और जामवन्त को बुलाकर कहा—"यह काम साधारण रीछ और बन्दरों का नहीं हैं। इसके लिये बड़ी सावधानी समझ बूझ और सहन शक्ति की आवश्यकता है। तुम चारों के चारों धीर गंभीर और शूर वीर हो। लड़ भिड़ भी सकते हो और समय समय के धर्म को भी जानते पहिचानते हो। अपने साथ जितनी सेना चाहो ले जाओ। मन बचन कर्म से इस काम को करो। सरदी के समय सूरज को पीठ दिखाकर धूप का सेवन किया जाता है। और आग को दृष्टि के सामने रख कर सेका जाता है। स्वामी की सेवा के लिये सब का परत्याग हो। परलोक सेवन के निमित्त माया का त्याग किया जाता है। फिर शोक मोह और भ्रम का भय जाता रहता है। शरीर धारण करने का फल यही है कि राम की सेवकाई की जाय। इससे बढ़ कर और कोई भी बात नहीं है। तुम भग्यवान हो। तुम्हें यह सेवा किसी मुख्य अभिप्राय से सौंपी जा रही है। तुम केवल दक्षिण की दिशा में जाओ और उसी दिशा में तुमको सीता का पता लगेगा क्योंकि जहां तक मैंने देखा है आकाशी विमान इसी दिशा की ओर उड़ता हुआ गया है।"

ये राम और सुग्रीव के चरणों में झुक झुक कर विदा होकर चले गये। सब से अन्त में हनूमान ने आकर मस्तक झुकाया। राम ने पास बुलाकर कहा—"तुम सबसे पहिले मुझ से मिले थे और अन्त तक तुम्हें साथ देना होगा। जाओ यह मुद्रा (अंगूठी) ले जाओ। सीता से मिलो, समाचार लो, समझाओ, बुझाओ, धीरज दो और मेरा वृतान्त सुनाओ।' हनूमान भी प्रणाम कर चल खड़े हुये।

राम सब कुछ जानते हुये नर लीला कर रहे थे और जब तुम इस महारामायण को आद्योपान्त समझ कर पढ़ लोगे, उसका सब रहस्य और गुप्त भेद तुम्हारी समझ में भी आ जायेगा।

व्यवहार का पालन करना नीति है। राम, नाम के बन कर हमको तुमको और सारे नर जगत को खेल दिखाने चले थे कि मनुष्य को किस प्रकार गृहस्थ आश्रम का व्यवहार करते हुये धर्म पालन करना चाहिये। वह मर्यादा पुरुषोत्तम थे। उनका खेल केवल गृहस्थ आश्रम का खेल था। वह जानते थे कि सीता को रावण लेगया है, लेकिन एक बन्दर को भी वह भेद नहीं बताया। क्यों? क्योंकि शबरी रूपी भक्ति के संपूर्ण अंग से मिलने के पश्चात् उनको ऋष्यमूक की यात्रा करनी पड़ी थी। यहां वह यात्रा करे जो पहिले गूँगा बहिरा बन जाये।

आंख कान मुख, मूँद कर, चल सतगुरु के पन्थ।
क्यों पढ़ पढ़ कर पच मरे, लाखों पोथी ग्रन्थ ॥१॥
ग्रन्थों से ग्रन्थी बँधे, ग्रन्थ का करें विचार।
आग लगी तन मन फुँका, भागे तज न असार ॥२॥
नर बानर को बांध ले, ऋष्यमूक गिरि आय।
समझे सूझे आप ही, साधन सहज उपाय ॥३॥

मन चंचल बानर बना, खेले खेल अपार।
इसके संशोधन बिना, मिले न गुरु गुण सार ॥४॥

हनूमान सुग्रीव, अंगद नल और नील, ।
इनको अपने साथ ले, जो तू पुरुष सुशील ॥५॥

रामायण पढ़ कर समझ, राम रहस्य चरित्र।
इस चरित्र में है भरा, ज्ञान विवेक विचित्र ॥६॥

बिन साधन साधा नहीं, अनुभव केहि विधि होय।
पढ़ा लिखा सोचा बहुत, पंडित हुआ न कोय ॥७॥

चतुर्थ भाग

पहिला समुल्लास

सीता जी की खोज

कोई कहीं गया। कोई कहीं गया। अंगद का दल दक्षिण की ओर चला। बने, पर्वत, ऊसर, ग्राम, बस्ती और उजाड़ छान डाले। जो कोई मिला, उससे पूछ डाला। पता नहीं लगा। रास्ते में कहीं कहीं निश्चर (निशा या रात की चर्या करने वाले) मिल जाते थे। बन्दर तो दिनचर (दिन की चर्या करने वाले) थे। यह उनसे बहुत घबराते थे। नोच खसोट का वर्ताव उनके साथ करते थे और उन्हें मार भी डालते थे।

सब कुछ किया। सीता का पता नहीं लगा। किसी ने नहीं बताया वह क्या हुई, कहाँ गई, कौन ले गया, और किस के पास है।

बन में कहीं २ ऋषि मुनि तपस्वी भी मिल जाते थे। यह उनके पास जाकर घेर घार करते। पूछा पेखी से काम लेते। इनमें से सीता का नाम भी तो किसी ने नहीं सुना था, देखना तो अलग रहा। अनोखा नाम! निराला चरित्र!! नाम भी कैसा? खेत में हल जोतने की लकीर! किसी किसी को इन बन्दरों की सरलता पर हँसी आ जाती थी। वह इनका भयंकर रूप देख कर डर जाते थे। अपनी हँसी को रोक रखते थे। उनका उत्तर केवल 'नहीं' होता था।

न हमने आंख से देखा न कानों ही से सुना।
वह सीता क्या है नहीं हमको इसका कुछ भी पता ॥१॥
लकीर खेत की है, खेत ही में वह होगी।
बताये कैसे कोई ज्ञानी ध्यानी योगी ॥२॥
यहाँ नहीं है कहाँ है, नही है हमको पता।
जो जानते तो तुम्हें, देते इसका भेद बता ॥३॥

उदासी छागई! निराश हुये। साहस को धक्का लगा। करते भी तो क्या करते! न लौट कर जा सकते थे, न वहां रह सकते थे। इनकी दशा का अनुमान कौन कर सकता था।

जाके पैर न फटी बिवाई। वह क्या जाने पीर पराई॥

फिर भी खोज में लगे ही रहे।

चलते २ एक ऐसे घने बन में पहुँचे, जहां पशु पक्षी, जीव-जन्तु कोई भी दिखाई नहीं देते थे। मनुष्य का तो नाम भी नहीं था। सारा जगत मनुष्यमात्र के आधार पर रहता है। जहाँ मनुष्य है वहाँ सब कुछ है। जहां मनुष्य नहीं, वहां कुछ भी नहीं रहता। सोचने लगे यह निर्जन बन क्यों ऐसा उजाड़ है। भूक प्यास से दुखी हुए। फल पत्ते तक दिखाई नहीं दिये। पानी का कहीं नाम भी नहीं था। गला सूख गया। मुँह में छाले आगये। कांप उठे और ज़बान मुँह से बाहर आगई। निश्चय हुआ कि

मृत्यु यहां ले आई है। बन्दर इस जगह आकर जीते नहीं रह सकते।

हनूमान ने उनकी दशा देखी। तरस आया। एक ऊँची पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गये। इधर देखा, उधर देखा। न कोई बस्ती दिखाई दी, न पानी दृष्टि में आया। फिर भी अपनी आंखों की वृत्ति को दूर दूर भेजा। कई कोस पर बगुले, राजहँस, कौए और अनेक प्रकार के पक्षी उड़ रहे थे। ढारस बँधी। अनुमान हुआ वहाँ पानी अवश्य होगा।

पहाड़ी से नीचे उतर कर बन्दरों की सेना को साथ लिया। गिरते पड़ते किसी प्रकार उस स्थान पर पहुँचे। उस जगह एक गुफा बनी हुई थी, जो तंग और अँधेरी थी। वहाँ देवी का एक छोटा विचित्र मन्दिर देखने में आया। इसके इर्द गिर्द चहुँ ओर पानी से भरे हुये तालाब हवा के झोकों से लहरा रहे थे, और इनमें कमल के फूल बहुतायत से खिले हुए थे।

मन्दिर में गये। एक तपस्विनी सुन्दरी बैठी हुई थी। उसे नमस्कार किया। अपना वृत्तान्त आदि से लेकर अन्त तक सुना दिया।

वह बोली, "पहिले तुम जाकर फल फूल पत्ते जो हाथ लगें खाओ, पानी पीओ। फिर मेरे पास आओ। तुम्हारे चित्त भूक-प्यास से ठिकाने नहीं हैं।"

ये गये। खा पीकर सन्तुष्ट हुए। उस देवी को आकर नमस्कार किया। उसने उन्हें आसन देकर बैठाया—"सुनो बन्दरो! दृष्टि सृष्टि है और सृष्टि दृष्टि है, साक्षी रूप में दृष्टि सृष्टि का व्यवहार हो तो सुगमता, सरलता और सहजता होती है और जहाँ अहंकार के वश में आकर प्राणी परिश्रम के साथ प्रयत्न करता है, वहाँ कठिनाई होती है।"

साखी आँखी ज्ञान की समझो अपने मन।
बिन साखी नहीं जग छुटे, करलो लाख जतन ॥
साखी रूप में देखिये, इस जग का व्यवहार।
आँख खुले पर फिर नहीं, दुखदाई संसार ॥

तुम मेरे पास आगये, अच्छा किया। तुमको सीता का पता मिल जायगा। घबराओ नहीं। सीता का पता तो मिला हुआ है। तुम्हारी चंचलता ने परदा बन कर उसे ढक रक्खा है।

मन चंचल को थिर करो, देखो विमल बहार।
मध्य सुषम्ना तिल बसे, तिल में जोति अपार ॥
तिल में जोति अपार है, जोति में जोति को खान।
जोति के अन्तर्गत रहे, गुरुगम गुरु का ज्ञान ॥
दौड़त दौड़त दौड़िया, जहाँ लग मन की दौड़।
दौड़ थके मन थिर भया, वस्तु ठौर की ठौर ॥

मैं रमा शक्ति हूँ। मेरा सहारा लिये बिना न राम की समझ आती है, न सीता को कोई देख सकता है। मैं आप राम के पास जारही हूं। तुम अपनी आँखों को बन्द करलो। सिन्ध के तट पर पल मारने में पहुंच जाओगे। वहा सीता (लकीर की वृति) का दर्शन होगा।" बन्दरों ने आंख बन्द करली।

जब आँख खोली तो न मन्दिर है न गुफा है, न रमा देवी है और वह के सब समुद्र तट पर खड़े हुए हैं। समुद्र लहरें ले रहा है।

जो कि देखा स्वप्न था जो कुछ सुना था स्वप्नवत।
क्या कहे कोई उसे है चकित मन वाणी की गत ॥

दूसरा समुल्लास

संपाती

समुद्र का तट! सुनसान दृश्य! वायु बह रही है। पानी

झकोले ले रहा है। पक्षी झँड़ला रहे हैं। पखेरू उड़ रहे हैं
शब्द की भनक कानों में पड़ी—"वर्षों से भूखा हूं अह
नहीं मिला। निराहार जीवन व्यतीत हो रहा है। आज
भाग्य का तारा उदय हो आया। विधाता' ने आप ही अ
बहुत आहार भेज दिया। वर्षों की कसर आज निकलेगी
पेट भर कर खाऊँगा। तृप्ति होगी। शान्ति आयेगी।

शब्द के सुनते ही यह सब के सब डर गये—"यह क
है! कौन बोल रहा है।"

बन्दरों में खलबली पड़ गई। सब कहने लगे "पक्ष
समाप्ति का दिन निकट आगया। अब तक सीता की सुध न
मिली। क्या करें, न यहाँ रह सकते हैं न घर जा सकते हैं

कैसी दुविधा में पड़े, कैसी दुचिताई है आज।
क्या करें कैसी करें, अब तक हुआ पूरा न काज॥

युवराज अंगद की आंखों में आंसू भर आये—"मेरी
मृत्यु आ गयी। यहाँ सीता का पता नहीं लगा। यहाँ लौट
पर सुग्रीव मुझे जीता न छोड़ेगा। अब तक तो मेरा जीव
समाप्त कर चुके होते। राम न आगये होते तो मैं जीता
बचता।"

राजकुमार की करुणा जनक दशा देखकर सारे बन्दर
पड़े! दुख की अवस्था में सुने हुए भयानक शब्द का स्मर
भूल गये।

जामवन्त ने समझाया-"युवराज! तुम दुखी क्यों होते हो
तुम्हारी आँख पर परदा पड़ा हुआ है। तुम राम को
समझ बैठे हो, यह बड़ी भूल है। राम आये। तुमको सी
की खोज का काम दिया। यह तुम्हारी वीरता और बल बु
की दृढ़ता की परीक्षा का समय है। तुम घबराते क्यों हो
राम नर लीला कर रहे हैं। उनका काम तो हुआ ही है।

किसी के आधीन नहीं। हाँ, व्यवहार में नट-क्रिया का खेल दिखा रहे हैं। खेल खेल में खेल को देखो। बालक हो, बालपन का खेल खेलो। जहां राम हैं, राम का सहारा है वहाँ मृत्यु कैसी !

राम ही में ज्ञान है और राम में अनुमान है,
राम ही में देह वाणी बुद्धि का प्रमाण है।
राम को तुम नर न जानो राम नारायन हैं मित्र,
राम ही में है भलाई राम में कल्यान है।
राम की सेवा करो भक्ति के दल का साजो साज,
राम जीवन है हमारा राम सच्चा प्राण है।
राम निर्गुण और अगुण हैं ब्रह्म इनमें गुण कहां,
यह सगुण का रूप प्रगट रूप यह भगवान हैं।
अंग दो अंगद बनो, राम जब हैं अंग संग,
राम का भक्तों के मन में भक्ति का अभिमान है।

कुछ तो ढारस बँधी, लेकिन ढारस तो ढारस ही होती है। जब तक राम की सच्ची दया न हो, यह ढारस भी दृढ़ नहीं होता।

फिर भयानक शब्द की ध्वनि कान में पड़ी—"आया हुआ अहार अब जाता कहां है ! वह तो मेरे भोग ही के लिये आया है।

हड्डी पसली तक चबाकर इनको मैं खा जाऊँगा।
पेट मेरा अब भरेगा शान्ति को तब पाऊँगा॥
की विधाता ने दया आया निकट मेरा अहार।
नाज पानी मिल गया है भूख को बिसराऊँगा॥
मांस खाऊँगा, पीऊँगा रक्त छोड़ूगा न मैं।
ये कहां जाते हैं, इनको मैं पकड़ कर लाऊँगा॥
गिद्ध हूँ जाती है दृष्टि, मेरी लाखों कोस तक।
यह हैं अब पंजों में मेरे खाऊँगा हां खाऊँगा॥

भय नहीं चिंता नहीं दुविधा नहीं मन में रही।

खाना पीना हाथ आया तृप्त अब हो जाऊँगा॥

बन्दर डरे। गिद्ध अपने गढ्ढे से निकला, वह पहाड़ के आकार का था। रुण्ड मुण्ड! पंख और पर से रहित! बन्दरों की दृष्टि इस पर पड़ी इससे कौन बच सकता है! यह सबको झपट कर मुँह में रख लेगा! इसकी दृष्टि में बिजली की आकर्षण शक्ति होती है। बड़े बड़े अजगर इसका शब्द सुन कर प्राणहत हो जाते हैं और उन्हें नोंच नोंच कर खा जाता है।

जामवन्त ने कहा—"भय न करो जटायु भी गिद्ध था, जिसने राम के काज में अपना प्राण त्याग दिया। कौन जाने यह भी उसी प्रकार का हो। जैसे वह पर्वताकार था वैसे ही यह भी है।"

गिद्ध ने जटायु का नाम सुना, पहाड़ के समान हिलते डोलते इनके पास आया। यह अपनी उछल कूद भूल गये। भागते भी तो कहां भाग कर जाते! कहते हैं कि अजगर की आंखों में प्रबल आकर्षण शक्ति होती है। वह उड़ते हुये पक्षी को आकाश में देखकर दृष्टि की धार से खींच कर मुँह में रख लेता है। बड़े बड़े पशुओं को खींच खींच कर खा जाता है। इस गिद्ध गरुड़ के सामने इसकी भी नहीं चलती। वह चुपचाप अडोल बन जाता है और यह उसे खा जाता है।

वह उसके पास आया। "तुम जटायु को कैसे जानते हो? वह कैसे मरा? डरो नहीं। अब मैं तुम्हें नहीं खाऊँगा। अभय होकर मुझे जटायु का वृत्तान्त सुनाओ।

जामवन्त सब सेना में स्याना था। सीता-हरण और राक्षस के हाथ से जटायु बध और राम के क्रिया-कर्म की कथा कह सुनाई।

इस गृद्ध ने कहा—"मैं जटायु का सगा भाई हूं। धन्य था उसका जीवन जो राम के काज आया। तुम ठहरो! समुद्र के किनारे नारियल के वृक्ष बहुत हैं। तोड़ो, खाओ, पेट भरो। मैं समुद्र में स्नान करके और जटायु के नाम पर तिलांजली देकर के अभी आता हूँ। तुम में से दो चार बन्दर मुझे वहाँ ले चलें। तब तुम को सीता का पता दूँगा और अपनी कहानी सुनाऊँगा।"

यह कह कर वह तो नहाने धोने वहाँ चला गया और यह अभय होकर खाने-पीने लगे।

तीसरा समुल्लास

सम्पाती की कथा

थोड़ी देर पीछे सम्पाती आया। सबने उसे नमस्कार किया। इसने भी नमस्कार किया। पास आकर बैठ गया।

सम्पाती ने कहा—

हां बन्दरो! इस गिद्ध की तुम सब कथा सुनो।
जो कुछ मुझ पै बीती वह सारी कथा सुनो॥

मैं सम्पाती (संस्कृत 'सम' पहिले और पा=गिरना, उतरना) गरुड़ (गरुत=पंख, और डी=उड़ना) का पुत्र हूँ। जटायु (जटा=समूह=इकट्ठा किया हुआ, और 'यु' आयु) अरुण देवता का पुत्र था। उसकी आयु बहुत थी। गिद्ध अधिक दिनों तक जीते हैं। हम दोनों मित्र थे। भैयापन का नाता था। एक दूसरे को भाई भाई कहते थे। हमने गायत्री मन्त्र को सुन रक्खा था—"ओ३म् भू भुवः स्वः तत् सवितुर वरेण्यम्" इसका अर्थ यह है—'भूलोक, भुवलोक और स्वर्गलोक तक के विचार को छोड़ कर ओ३म् का जाप करते हुए तत् (उस)

सवितुर (सूरज), वरेण्यम् (ध्यान योग्य) के पास जाओ, और वहाँ उसके सन्निकट पहुंच कर भर्गो (प्रभाव) देवस्य (उस देवता) का (धी महि) धारण करो। धियो योनः प्रचोदयात्—वह तुम्हारी बुद्धियों का प्रेरक हो जाय।'

सम्पूर्ण मन्त्र यह है—ओं भूर्भुवः स्वः तत् सवितुर वरेण्यम् भर्गो देवस्य धी महि धियो योनः प्रचोदयात्।"

और साधारण बोली में उसका उल्था यह है—"ओ३म् को सुमरते हुये भूलोक, भुवलोक, और सुरलोक तक की भावनाओं को भुला कर उस ध्यान योग्य सूरज के पास जाओ। उसके प्रभाव को धारण करो। वह तुम्हारी बुद्धियों का प्रेरक हो जायगा।"

"हम दोनों ने इस मन्त्र को सुन लिया। उसका आशय भी जान लिया। गुरु नहीं मिला। न गुरु करने का विचार हुआ। धोका खा गये और अपने बल से इसी सूरज की ओर उड़े। यह नहीं समझा कि वह सूरज और है और हमारे घट में रहता है। गुरु के बिना यह रहस्य समझ में नहीं आता।"

तरुण अवस्था थी, बल का अभिमान था। उड़े, उड़ चले। जटायु सूरज के तेज को सह न सका तो वह नीचे उतर आया। मुझमें अधिक घमण्ड था, चला ही गया। सूरज की गर्मी से मेरे पंख झुलस कर जल गये और मैं रुण्ड मुण्ड होकर इस पृथ्वी पर गिर पड़ा। मेरे जले हुये पंख फिर नहीं जमे। जटायु तो दण्डक बन के समीप गिरा और मैं यहां समुद्र के तट पर।"

"यहाँ चन्द्र नामी एक मुनि रहते थे। मेरी दशा देखी, दया आई। कहने लगे जो होना था वह हो चुका। अब चुपचाप यहां बैठा रह। त्रेतायुग में राम ब्रह्म का अवतार धारण

करेंगे, सीता हरी जायगी। राम की सेना बानर और रीछों के रूप में उसे खोजते हुये यहाँ आयगी। तू उनका दर्शन पायेगा और कुछ दिनों पीछे तेरे पंख फिर जम आयेंगे। तब से मैं यहां ही पड़ा हूं और तुम्हारी बाट देख रहा हूं। तुम धन्य हो जो राम के दूत बन गये और उनकी सेवा कर रहे हो और मैं भी धन्य हूँ जो कि तुम्हारा दर्शन मुझे मिल गया।" सम्पाती यह कहानी सुना कर चुप हो गया।"

जामवन्त ने कहा—'अब हमको सीता का पता दीजिये।'

सम्पाती बोला—'दृष्टि साधन करने से मेरी दृष्टि शक्ति तो बहुत बढ़ गई है, लेकिन मैं चल फिर नहीं सकता। दूर दर्शक अवश्य हूं दुरगामी नहीं हूं। जब से मैंने दृष्टि का साधन सूरज के आदर्श को सामने रखकर किया यह शक्ति घट गई। बिना गुरु की सहायता और संस्कार लिये हुये हानि होती है।'

'लङ्का चित्रकूट (तीन शिखर वाले) पर्वत पर बसा हुआ है। वही रावण की राजधानी है और उसके राज काज का ऐसा प्रबन्ध है कि वह बे खटके वहां रहता है।'

'इसी लंका में अशोक (शोक रहित) वाटिका है। सीता को ले जाकर रावण ने उसी बगीचे में रक्खा है।'

'क्या कहूं शरीर बूढ़ा हो गया, नहीं तो तुम्हारी कुछ सहायता करता। देखता हूं। जा नहीं सकता। जो सौ योजन समुद्र में जा सकता है और उसे लाँघ सकता है, वह लंका में जाकर सुधि ले आ सकता है। जिसके नाम के प्रताप से भक्त भवसागर को पार कर लेते हैं, उनके लिये यह लंका का सागर कितनी बड़ी बात है। धीरज रक्खो और काम में लगो और तुम्हारा काम पूरा होकर रहेगा।' यह कह कर सम्पाती गिद्ध वृक्ष के खोखले में चला गया जो उसका निवास स्थान था।

चौथा समुल्लास

बल पराक्रम विचार

समुद्र का तट! रीछ बानरों की सेना! लहरें उठती हैं, ऊपर जाती हैं, नीचे आती हैं और फिर समुद्र की गहराई में चली जाती हैं। पानी बढ़ा। बढ़ता हुआ पृथ्वी में दूर तक आया और उसकी सामिग्री को बहा कर लेगया और अपने में मिला लिया। रात और दिन समुद्र का खेल इसी प्रकार होता रहता है। इस समुद्र में ब्रह्म सृष्टि का दृश्य पल पल और क्षण क्षण आँखों के सामने आता रहता है। सृष्टि ब्रह्म से होती, ब्रह्म में ठहरती और ब्रह्म में लय हो रहती है। ब्रह्म न घटता है, न बढ़ता है। जैसे का तैसा बना रहता है। न उसमें से कुछ निकलता है, न उसमें कुछ मिलाया जाता है। भरा-पूरा रहता है।

सम्पाती की बात सुन कर रीछ और बन्दर विचार करने लगे। सीता का पूरा पूरा पता तो लग गया। रावण उसे ले गया है और अशोक वाटिका में ले जाकर रख छोड़ा है। सम्पाती की दृष्टि में तो आगई। हमने सुन लिया। सुनना ही सब कुछ नहीं है। जब तक अपनी आंखों से न देख लो तब तक उसका विश्वास करना बहुत बड़ी भूल है।

पोथियों में ढूंढते हैं लोग ईश्वर भेद को।
भेद तो पाते नहीं पाते हैं जग के खेद को॥
सुन लिया सुनने में ईश्वर ज्ञान रहता है कहाँ।
पढ़ लिया देखा नहीं पढ़कर समझता है कहां॥
जब नहीं देखा तो इसका नाम लेना व्यर्थ है।
है निरर्थक काम इसका तुम कहो क्या अर्थ है।

बे मिले वे देखे क्या कहते हो बाचक ज्ञान को।

हम नहीं सुनते तुम्हारी युक्ति और प्रमाण को॥

जामवन्त ने कहा— मैं क्या कहूं। शरीर बूढ़ा और निर्बल हो गया है, नहीं तो इस समुद्र का लांघ जाना कितनी बड़ी बात था। जब श्री विक्रम बावन महाराज का अवतार हुआ था, मैं उस समय युवा अवस्था में था। इधर बावन ने अपने डील को बढ़ा कर तीन पग से सारे ब्रह्माण्ड को नाप लिया और मैंने एक ही क्षण में सात बार उनकी परिक्रमा की।'

अंगद बोले - 'भाई! जाने को तो मैं पार जा सकता हूँ लेकिन लौटने में मुझे सन्देह है।'

जामवन्त ने अगन्द की पीठ ठोकी— 'तुम सब कुछ कर सकते हो। तुम्हारे सुयोग्य होने में कोई सन्देह नहीं है। यह काम किसी और के लिये है।

'जिसका काम उसी को साजै। और करे तो डंडा बाजै।'

फिर जामवन्त ने हनूमान की ओर दृष्टि की। 'तुम आंख कान और मुँह बन्द किये हुये क्यों बैठे हो! तुम सब से पहिले राम से मिले। मध्य में भी तुम को काम करना पड़ेगा और अन्त तक तुम राम के साथी और सहायक बने रहोगे। तुम्हारा जन्म इसीलिये हुआ है। तुम पवन के पुत्र, चलने में आँधी हो। अभी यहाँ हो, अभी क्षण मात्र में वहाँ पहुंचे। तुम्हारे अकेले के लिये कोई काम न कठिन है, न दुर्लभ है। तुम जो चाहो कर सकते हो। अब काम का इससे अच्छा अवसर कब आयेगा!'

जामवन्त की बातें बड़ी प्रभावशाली थीं। सुनते ही हनूमान पर्वताकार होगये। आँख माथा और सिर तेज से चमक उठे।

सुमेरु पर्वत के समान उनका शरीर स्वर्ण वर्ण का होगया और वह पर्वतों के राजा प्रतीत होने लगे। तीन बार सिंह नाद करते हुये गर्ज उठे :—इस समुद्र को मैं सोख सकता हूँ' मेरे सामने क्या है ! चल कर रावण को अभी मारता हूँ और उसके सहायकों को देखते देखते मिट्टी में मिला देता हूँ। त्रिकूट पहाड़ को अपने भुजा बल पर उठाये हुए यहाँ ला सकता हूँ। मुझ में ऐसा बल पराक्रम है। लेकिन ऐ जामवन्त ! तुम केवल इतनी शिक्षा और दो कि इस समय मुझे क्या करना उचित है ?"

जामवन्त ने कहा—'इस समय तुम लंका जाकर सीता को अपनी आँखों देख आओ और राम को वहाँ का वृत्तान्त आकर सुनाओ। राम आप तुम हम सबको साथ लेकर लंका चलेंगे, रावण के साथ युद्ध होगा। राम की कीर्ति संसार में फैलेगी। राम का अवतार इसी लीला के निमित्त हुआ है। यों तो उन्हें सामर्थ्य है कि अपने किसी छोटे से छोटे सेवक से बड़े काम ले सकते हैं।'

'उठो जाओ, समुद्र को लांघो, लंका जाओ, सीता को देख कर पक्ष के पहिले राम के पास चल कर वहां का समाचार सुनाओ।'

॥ इति ॥

इस खंड के सम्पूर्ण आशय की संक्षिप्त व्याख्या

रामायण का यह किष्किन्धा काण्ड है। हमने इसका नाम मन साधन खण्ड रक्खा है। क्यों ? क्योंकि इसमें मन के साधन की विधि को अलंकारों की परिभाषाओं को चित्रों के रूप में दिखाया गया है। ऋष्यमूक पर्वत—चुपचाप साधन में रह कर सब से अलग थलग रहना। बानर या बन्दर-मन का

ंचल रूप। वानरी सैना-मन की चंचल वृत्तियां। मुख्य चंचल
ृत्तियां—सुग्रीव, अगन्द, हनूमान, नल, नील। हनूमान-मान का
ुनन करने वाला। बालि—स्थूल कामवृत्ति, जिसका मार देना
आवश्यक है। सुग्रीव—(सुखण्ड)—काम का सूक्ष्म अंग, जो
ुबचनी और सुकथना होता है। अंगद-(अंग देने वाला)-
क्रोध वृत्ति, जो सुरक्षक और स्वरक्षक होती है। नल-(बाँधने
वाला)—लोभ। नील (रँगने वाला)—मोह।

जामवन्त-जाम्बत-(जाम्ब—जामुन-वत्-समान या रँग)-जामुन
का रंग वाला-यह तमोगुणी मन का रूप है जो बड़ा समझ-
दार, बूढ़ा युक्ति का सुझाने वाला है। तारा-(तार-आंख की
पुतली) सुग्रीव की स्त्री।

जटायु और सम्पाती की व्याख्या पहिले आचुकी है।

साधन अवस्था में साधक का मुख्य सेवक चंचल मन ही
होता है। यह मित्र बना लिया गया तो काम जल्द हो जाता
है। यह शत्रु रहा तो फिर काम नहीं होता। इस के पाँच अंग
होते हैं:—काम-मीठे बचन बोलने वाला सुग्रीव, क्रोध-समय
पर अपना अमल दिखाने वाला-अङ्गद, लोभ—बाँधने वाला
—नल, जिसने राम का पुल बांधा था। मोह-रंग देने वाला-
नील, जिसने पुल के पत्थरों को मसाला दे दे कर दृढ़ किया
था। अहंकार-मान का हनन करने वाला-हनूमान। इसके
अलंकृत चरित्रों का आगे के खंड में वर्णन आयेगा।

मन के तीन रूप होते हैं-अज्ञानी, चंचल और मूढ़। इन्हीं
को सतोगुणी, रजोगुणी और तमोगुणी भी कहते है और
त्रिमूर्त्ति की दृष्टि से यह वैष्णवी, ब्रह्मावी, और शैवी नाम पाते
हैं। इसी अज्ञानी, सतोगुणी और वैष्णवी मन को राक्षस
कहते हैं। संस्कृत धातु 'रक्ष' (रक्षा) जो अपनी ही रक्षा का सबसे

विशेष ध्यान रक्खे वह राक्षस है। इन तीनों ही को मिला कर जो एक करे वह साधक (साधन करने वाला) है। इस राक्षसी मन का अंग विभीषण है। संस्कृत वि (बहुत) और 'भी' (डरना, डर दिलाना) इस को विशेष डर है। इस अज्ञानी मन का वर्णन आगे के काण्ड में आयेगा।

अज्ञानी, वैष्णवी और सतोगुणी मन उज्ज्वल होता है इस लिये उसका रंग श्वेत दिखाया गया है। इसका अलंकृत रूप विभीषण।

मूढ़ तमोगुणी और शैवी मन काला होता है इसलिये इस का रंग काला दिखाया गया है। इसका अलंकृत रूप जामवन्त

रजोगुणी चंचल और ब्रह्मावी मन में श्वेत और काला दोनों रंग हैं और दुरंगी के कारण वह दो रूपा, दुविधा, दुचिताई वाला और चंचल होता है। इसका अलंकृत रूप बन्दर।

सतोगुण तमोगुण दोनों अपने अपने रंग रखते हैं, रजोगुण में दोनों के अंग होते हैं।

रजोगुणी सुमित्रा के दो पुत्र लक्ष्मण और शत्रुघ्न।

सतोगुणी कौशिल्या के एक पुत्र राम।

तमोगुणी कैकई के एक पुत्र भरत।

मन की व्याख्याओं को पढ़ने वाले ध्यान देकर पढ़ें। तब अच्छे प्रकार महारामायणम् का आशय समझ में आता जायेगा। यह व्याख्या बहुत विवेकजनक प्रतीत होगी।

रामायण की कथा इसी ढंग पर आरम्भ हुई है।

॥ चतुर्थ खंड समाप्त ॥